CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

1415
5252

आचार्य संघतिलकसूरि प्रणीत

आरामसोहाकहा

(आरामशोभाकथा)

सम्पादन-अनुवाद
डा. राजाराम जैन
एवं
डा. (श्रीमती) विद्यावती जैन

प्राच्य भारती प्रकाशन
1989

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

14.5

5252

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Acharya Samgha-tilak's

ĀRĀMASOHĀKAHĀ

[ARAMASHOBHA-KATHA]

(A Short-Novel of Prakrit)

(Text with Hindi Tr., Critical Study and Notes etc.)

Edited and Translated

by

Dr. Raja Ram Jain
Prof. and Head of the P. G.
Dept. of Sanskrit & Prakrit,
H. D. Jain College, Arrah

Dr. (Smt.) Vidyawati Jain
Dept. of Hindi,
M. M. Mahila College,
Arrah

PRACHYA BHARATI PRAKASHAN
ARRAH
1989

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Published by
Ms. RATNASAGAR M. Sc.
Mahajan Toli No. 2
ARRAH (Bihar) : 802301

First Edition : Feb., 1989

Price : Rs. 16/-

©
Prachya Bharati Prakashan

Printed by
Ambika Composing Agency,
Naveen Shahdara, Delhi-110032

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकाशकीय

विश्व वाङ्मय में प्राकृत कथा-साहित्य का विशिष्ट स्थान है। इस साहित्य ने १६-१७वीं सदी से ही प्राच्य एवं पाश्चात्य लेखकों का ध्यान आकृष्ट किया है और अंग्रेज़ी, यूनानी, अरबी एवं फारसी के कथा-साहित्य के लिए भी वह आदर्श एवं प्रेरक रहा है। मुगल-काल में प्राकृत के कुछ कथा-ग्रन्थों का अरबी एवं पर्शियन-भाषा में अनुवाद अथवा भावानुवाद भी किया गया, ऐसा कुछ विद्वानों का विचार है। इसी एक बात से भी उसके महत्त्व पर प्रकाश पड़ता है।

प्राकृत कथा-साहित्य का बहुल भाग अभी तक अप्रकाशित ही है। जो प्रकाशित है, उसका भी आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद नहीं हो सका है। वस्तुतः उक्त साहित्य प्राच्य भारतीय संस्कृति, लोक-जीवन, सामाजिक रीति-रिवाजों, लोक-विश्वासों तथा विविध साहित्यिक विधाओं का प्रतिनिधि-साहित्य है। प्राच्य-विद्याविदों का ऐसा पूर्ण विश्वास है कि प्राकृत-साहित्य के अध्ययन एवं मनन के बिना आधुनिक भारतीय-साहित्य का इतिहास, उसका समीक्षात्मक एवं भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन तथा मध्यकालीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति का अध्ययन अपूर्ण ही रहेगा।

'आरामसोहाकहा' भी प्राकृत कथा-साहित्य की उपन्यास-शैली की एक लघु-रचना है। उसमें गो-पूजा एवं नाग-पूजा के साक्षात् फलों पर प्रकाश डालते हुए लेखक ने आत्मवाद, पुनर्जन्म एवं पूर्वकृत-कर्मों के फल पर सरस एवं रोचक कथा के माध्यम से सुन्दर प्रकाश डाला है। यह कथा आचार्य हरिभद्रसूरि द्वारा लिखित 'सम्यक्त्वसप्तति' नामक ग्रन्थ के विषय-विश्लेषण के प्रसंग में उक्त कृति के टीकाकार आचार्य संघतिलकसूरि द्वारा उदाहरण स्वरूप लिखी गई है। संघतिलकसूरि का विस्तृत परिचय फिलहाल उपलब्ध नहीं है। जो भी जानकारी अभी तक मिल सकी है उसके अनुसार वे रुद्रपल्लीगच्छ के आचार्य गुणशेखरसूरि के शिष्य थे। उनका लेखनकाल सन् १४७९ के आसपास

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रहा है। उन्होंने हरिभद्रसूरिकृत ७० गाथा-प्रमाण 'सम्यक्त्व-सप्तति' नामक ग्रन्थ की विशाल टीका लिखी थी और उदाहरणों के रूप में प्राकृत-भाषा-निबद्ध बीस कथाएँ (अथवा उपन्यासिकाएँ) लिखी थीं, जिनमें से एक यह 'आरामसोहाकहा' भी है।

'आरामसोहाकहा' की भाषा परिनिष्ठित महाराष्ट्री प्राकृत है। लेखक ने इस रचना में अत्यन्त सरल एवं लोकप्रचलित शब्दों एवं मुहावरों का प्रयोग कर उसे पर्याप्त रोचक, मोहक एवं प्रवाहपूर्ण बनाने में सफलता प्राप्त की है।

यह आश्चर्य का विषय है कि विविध दृष्टिकोणों से महत्त्वपूर्ण होने पर भी, जहाँ तक मुझे जानकारी है, इस रचना का अभी तक किसी भी भारतीय अथवा विदेशी भाषा में न तो अनुवाद ही हुआ और न ही इसका समीक्षात्मक अध्ययन। प्रस्तुत संस्करण के माध्यम से इस अभाव को दूर करने का प्रयत्न किया गया है। इसके सम्पादन-अनुवाद एवं समीक्षात्मक अध्ययन के साथ-साथ उसे छात्रोपयोगी संस्करण का रूप दिया है—प्राकृत-साहित्य के महारथी विद्वान् प्रोफ़ेसर डॉ॰ राजाराम जैन एवं डॉ॰ विद्यावती जैन ने। उनके प्रति अपना आभार व्यक्त करते हुए पाठकों से हमारा विनम्र निवेदन है कि इसमें यदि कुछ त्रुटियाँ रह गई हों, तो उनकी ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करने की कृपा करें, जिससे कि अगले संस्करण में उन्हें दूर किया जा सके।

कलापूर्ण एवं निर्दोष तथा शीघ्र-मुद्रण की व्यवस्था के लिए हम डॉ॰ गुलाबचन्द्र जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली के प्रति विशेष आभार व्यक्त करते हैं जिनके प्रयत्नों के बिना इस पुस्तक का प्रकाशन सम्भव न था।

अन्त में हम उन आदरास्पद प्रेरक विद्वानों, अनेक विश्वविद्यालयों के प्राकृत-अध्यापकों तथा सभी छात्र-छात्राओं के प्रति भी आभारी हैं जिन्होंने आरामशोभाकथा को प्रस्तुत संस्करण के रूप में प्रकाशित करने की हमें प्रेरणा दी।

आरा
वसन्त पंचमी, १० फरवरी १९८९

विनम्र,
रत्नासागर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रस्तावना

आरामशोभा-कथा : स्रोत एवं परम्परा

प्राकृत-साहित्य में आचार्य हरिभद्रसूरि का नाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि उन्होंने अनेक मौलिक ग्रन्थों की रचना के साथ-साथ विविध कठिन ग्रन्थों पर विस्तृत एवं उच्च-स्तरीय प्रामाणिक टीकाएँ भी लिखी हैं। हरिभद्र द्वारा रचित ग्रन्थों में से ७० गाथा-प्रमाण 'सम्यक्त्व-सप्तति' नाम का एक लघु-ग्रन्थ भी है। आरामशोभा-कथा का मूल-स्रोत वही रचना है।

'सम्यक्त्व-सप्तति' को आधार मानकर आचार्य संघतिलकसूरि ने एक विशाल टीकाग्रन्थ लिखा है और उसमें प्रसंगानुकूल प्राकृत गद्य एवं पद्य में निम्नलिखित बीस कथाएँ अंकित की हैं—

गद्य कथा-साहित्य	पद्य कथा-साहित्य
१. रुद्रगुप्त-कथा	१. पुष्पचूल-कथा
२. आरामशोभा-कथा	२. आरोग्यद्विज-कथा
३. वज्रकर्णनृप-कथा	३. धनपाल-पण्डित-कथा
४. भीमकुमार-कथा	४. शुभमति-कथा
५. भद्रबाहु-कथा	५. मल्लवादि-कथा
६. सिद्धसेनदिवाकर-कथा	६. पादलिप्ताचार्य-कथा
७. बाह्याभ्यन्तरकामिनी-कथा	७. नागदत्त-कथा
८. दवदन्तराजर्षि-कथा	८. मेतार्यमुनि-कथा
९. संग्रामसूर-कथा	९. पद्मशेखर-कथा
	१०. चन्द्रलेखा-कथा
	११. नरसुन्दर-कथा

उक्त कथाओं का क्रमिक अध्ययन करने से विदित होता है कि लेखक ने समर्पित भावना से की जाने वाली देव एवं गुरु की पूजा तथा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वैयावृत्ति (साधु की सेवा-शुश्रूषा) के प्रभाव को व्यक्त करने हेतु आरामशोभाकथा की रचना की थी।

लेखक-परिचय

आरामशोभाकथा के लेखक संघतिलकसूरि संस्कृत एवं प्राकृत-भाषा और साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान् थे। उन्होंने अपनी गहन साहित्य-साधना से प्राकृत-कथा-साहित्य के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। किन्तु दुर्भाग्य से उनके विषय में विस्तृत जानकारी नहीं मिलती। मधुकरी-वृत्ति से जो कुछ जानकारी मिल सकी है, तदनुसार उनका संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

संघतिलकसूरि रुद्रपल्लीगच्छ के आचार्य गुणशेखर सूरि के शिष्य थे। उनका लेखन-काल सन् १४७९ के आसपास रहा है। अपने समय में वे महान् कथा-लेखक एवं टीकाकार के रूप में प्रसिद्ध थे। आचार्य हरिभद्र के परमभक्त होने के कारण उन्होंने उनकी प्राकृत-भाषा-निबद्ध ७० गाथा-प्रमाण 'सम्मत्त-सत्तति' (सम्यक्त्व-सप्तति) नामक रचना पर ७७११ पद्य-प्रमाण एक विशाल टीका-ग्रन्थ लिखा था तथा उसके विविध प्रसंगों को स्पष्ट करने हेतु गद्य एवं पद्य में उन्होंने प्राकृत में २० कथाएँ भी लिखी थीं। उन्हीं में से एक कथा प्रस्तुत आरामशोभा-कथा है।

'आरामशोभा-कथा' की भाषा महाराष्ट्री-प्राकृत है। बीच-बीच में कवि ने संस्कृत के २ एवं प्राकृत के २८ पद्य भी अंकित किए हैं। इससे आरामशोभा की शैली चम्पूकाव्य जैसी हो गई है।

संघतिलक ने प्रस्तुत रचना में अत्यन्त सरल एवं लोक-प्रचलित शब्दों एवं मुहावरों का प्रयोग कर उसे रोचक एवं प्रवाहपूर्ण बना दिया है। कहीं-कहीं समस्यन्त पदों के प्रयोग भी दृष्टव्य हैं (उदाहरणार्थ देखिए १, १८, ३८, ६२)।

कथा-संक्षेप

आरामशोभा रूपलावण्यवती एवं सहानुभूतिपूर्ण ललना है। उसके बचपन का नाम विद्युत्प्रभा है। वस्तुतः वह विप्रकन्या विद्युत के समान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कान्तिवाली एवं सर्वगुणसम्पन्न है। जब वह आठ वर्ष की थी तभी दुर्भाग्यवश उसकी माता का स्वर्गवास हो गया। फलतः आठ वर्ष की अवस्था से ही गृहस्थी का सारा कार्य उसे सम्हालना पड़ा। विद्युत्प्रभा के पिता ने उसके परामर्शानुसार, घर-गृहस्थी की सुन्दर व्यवस्था के हेतु, अपना दूसरा विवाह कर लिया। विमाता के आने पर विद्युत्प्रभा पर आराम के बदले विपत्ति का नया पहाड़ टूटने लगा। वह प्रतिदिन गायों को चराने जाती। मध्याह्न में उसे रूखा-सूखा भोजन मिलता, साथ ही विमाता के जले-कटे वचन भी सुनने को मिलते।

एक दिन वह जंगल में गायें चराते समय घास पर सो रही थी कि एक नागकुमार सर्प का रूप धारण किए हुए वहाँ आया। उसने विद्युत्प्रभा से अपनी प्राण-रक्षा की याचना की। उस सर्प का पीछा गारुडिक लोग कर रहे थे। विद्युत्प्रभा ने साहस करके उस नाग को अपनी गोदी में वस्त्रों से ढककर छिपा लिया। कुछ ही समय के बाद सर्प का पीछा करते हुए वे मन्त्रवादी वहाँ आए। उन्होंने विद्युत्प्रभा से सर्प के जाने का मार्ग पूछा। विद्युत्प्रभा ने बात बनाकर उन लोगों को लौटा दिया। उनके गमनोपरान्त विद्युत्प्रभा ने सर्प से कहा, "हे नाग-देव, अब तुम्हारे शत्रु जा चुके हैं अतः तुम भी यहाँ से चले जाओ।" यह सुनकर उस सर्प ने अपना वास्तविक देव-रूप प्रकट किया और विद्युत्प्रभा से वरदान माँगने को कहा।

विद्युत्प्रभा ने उस वृक्षहीन स्थान पर वृक्षोत्पत्ति का वर माँगा। तब उस नागकुमार ने उस कुमारी के ऊपर नाना प्रकार के पुष्प एवं फलों से युक्त एक ऐसी सुन्दर वाटिका बना दी, जिसमें छहों ऋतुओं के फल, फूल और पौधे थे तथा जो विद्युत्प्रभा के साथ-साथ चलती थी। जाते समय नागकुमार ने यह भी कहा, "जब भी तुम मुसीबत में पड़ो मुझे याद करना।"

इस आराम (वाटिका) के प्रभाव से विद्युत्प्रभा का विवाह पाटलिपुत्रनरेश जितशत्रु के साथ हो गया, और उसका नाम विद्युत्प्रभा से बदलकर आरामशोभा पड़ गया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आरामशोभा के रानी बन जाने से उसकी विमाता को बड़ा कष्ट हुआ। वह सोचने लगी—"मेरी कन्या के रहते हुए यह दुष्टा रानी कैसे बन गई!" अतः उसने अपने छल-कपट से गर्भावस्था धारण की हालत में उसे अपने यहाँ बुला लिया और जब पुत्र उत्पन्न हो गया तो धोखे से आरामशोभा को कुएँ में गिरा दिया और उसके स्थान पर अपनी कन्या विरूपा को उसके पलंग पर सुला दिया। साथ ही यह घोषित कर दिया कि प्रसव-वेदना के कारण उसकी एक आँख फूट गई और वह विरूपा बन गई है। बाद में पुत्र सहित उस कन्या को राजा के यहाँ भेज दिया।

इधर आरामशोभा ने कुएँ में गिरते ही नागकुमार का स्मरण किया। फलतः उस नागकुमार ने तुरन्त आकर आरामशोभा को अधर में ले लिया और कूप में ही उसे सुख-सुविधापूर्वक रखा।

एक दिन आरामशोभा के अत्याग्रह पर नागदेव ने आरामशोभा को अपने शिशु को देखने तथा स्तनपान के लिए राजमहल भेज दिया। उसके बाद भी इच्छानुसार वह कुछ दिनों तक वहाँ जाती रही। किन्तु एक दिन वह नागकुमार के कथन के अनुसार, सूर्योदय के पूर्व न लौट सकी और राजा के साथ ही रह गई। इस कारण उधर नागदेव की मृत्यु हो गई और इधर आरामशोभा भी मूर्च्छित हो गई। शीतलोपचार के पश्चात् आरामशोभा ने अपना सारा वृत्तान्त राजा को कह सुनाया। राजा ने उसे सान्त्वना देकर अपने पास ही रख लिया और उस विरूपा को तिरस्कृत कर निकाल दिया।

संयोग से एक मुनिराज वहाँ पधारे। उनके उपदेश से प्रभावित होकर आरामशोभा वैराग्य ग्रहण करके आत्म-कल्याण में प्रवृत्त हो हो गई।

अवान्तर कथाएँ

अवान्तर कथाएँ वस्तुतः मूल कथानक के विस्तार में अधिक सहायक सिद्ध होती हैं। कथा-विस्तार के निमित्त लेखक अनेक प्रासंगिक कथाओं के तान-वितान प्रस्तुत करते हैं। मूल-कथा का महत्त्व इनके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बिना भी यद्यपि यथावत् रहता है तथापि धर्म एवं दर्शन के विश्लेषण एवं सामाजिक मूल्यों के निदर्शन की दृष्टि से इनका भी अपना महत्त्व बढ़ जाता है।

जैन-दर्शन की सबसे बड़ी विशेषता है कि उसने कर्म-सिद्धान्त एवं पुनर्जन्म के सिद्धान्त को जैन धर्म का मूलाधार माना है। व्यक्ति जो भी कर्म करता है, उसका फल-भोग उसे इस जन्म में अथवा अगले जन्मों में करना ही पड़ता है। चाहे वह जल में रहे, चाहे थल में और चाहे स्वर्ग में, उससे उसे कोई भी बचा नहीं सकता।

इसी प्रकार जैन-दर्शन में आत्मा को अजर-अमर माना गया है। उसका विनाश सम्भव नहीं। जैनाचार्यों ने अपनी कथाओं के नायक अथवा नायिका के पूर्वजन्म के भवान्तरों अथवा वृत्तान्तों के माध्यम से उसे स्पष्ट किया है।

आरामसोहाकहा के कथाकार संघतिलकसूरि ने भी जैन-दर्शन की उपर्युक्त बातों को सिद्ध करने हेतु अवान्तर-कथाओं की सुन्दर नियोजना की है। आरामशोभा जब विविध संघर्षों के बाद सुख-शान्ति प्राप्त करती है, तो उसके मन में प्रश्न उठता है कि आखिर क्या कारण था, जो उसे प्रारम्भिक जीवन में घोर यातनाएँ सहनी पड़ीं? वह अपने पति के साथ संघप्रधान वीरचन्द्रसूरि के पास जाकर उनसे उक्त प्रश्न का उत्तर पूछती है और उत्तर में वे उसे उसके पूर्वजन्म का वृत्तान्त सुनाते हैं, जिसमें चम्पानगरी के सेठ कुलंधर की कथा, चोडदेशवासी दरिद्र-युवक नन्दन की कथा, श्रीदत्त सेठ की कथा, उज्जयिनी के सेठ मणिभद्र की कथा आदि अवान्तर कथाएँ सुनाकर उसके पूर्वकृत कर्मों के फल का वर्णन करते हैं और इनके द्वारा वे उसके मन को वैराग्य की भावना से भर देते हैं।

आरामशोभा का चरित्र

१. आरामशोभा एक कष्टसहिष्णु नारी है और कुल-परम्परा की मर्यादा के निर्वाह में वह अपना पूर्ण योगदान देती है। उसे अपनी विमाता

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

के दुर्व्यवहार का पूर्ण ज्ञान था। पर 'पिता कष्ट में न पड़ जाएँ' इस दृष्टि से वह राजा के समक्ष उसकी शिकायत भी नहीं करती। वह अपने पितृ-परिवार को भी समृद्ध बनाना चाहती है।

२. माँ का प्रेम एवं पुत्र-वात्सल्य की भावना उसमें पूर्णतया व्याप्त है। वह नागकुमार से अपने पुत्र से मिला देने के लिए अत्याग्रह करती है और इसी आग्रह के कारण नागकुमार द्वारा दिया हुआ उसका वैभव भी समाप्त हो जाता है।

३. साहस, दया और ममता उसमें पूर्णतया समाहित है। वह सर्प-वेशधारी नागकुमार को दया से प्रेरित होकर शरण देती है, जिससे उसे अनेक प्रकार की दैवी उपलब्धियाँ प्राप्त होती हैं।

४. वह अहंकार से सर्वथा रहित है। रानी बन जाने पर भी उसमें जरा-सा अभिमान नहीं है। यद्यपि वह इस बात से परिचित है कि उसकी विमाता उसका अनिष्ट चाहती है, तो भी वह अपने माता-पिता का यथेष्ट सम्मान करती है और यही कारण है कि वह गर्भावस्था में भी पुनः माँ के घर आ जाती है।

५. संसार में अनेक प्रकार के वैभव हैं, सुख हैं, फिर भी उसका इनके प्रति कोई आकर्षण नहीं है। यह जानकर भी कि नागकुमार सब-कुछ दे सकते हैं, उसने उनकी माँग नहीं की। यह उसके थोड़े में आत्म-सन्तोष का साक्षात् प्रमाण है।

६. संसार के वैभव और सुखों को प्राप्त करके भी वह अपने धर्म को नहीं भूलती। जैसे ही उसे मुनिराज का संयोग प्राप्त होता है वह धर्म-श्रवण करके आत्म-कल्याण में प्रवृत्त हो जाती है।

७. उदारता उसके चरित्र का प्रमुख गुण है। वह अन्य के अपराधों की अपेक्षा अपने कर्मों की ही निन्दा करती है। वह यह समझती है कि, 'जो कुछ अच्छा या बुरा हुआ है, उसका कारण मेरे पूर्वकृत कर्म ही हैं। नागकुमार के साथ जो मेरा स्नेह रहा है उसका भी कारण मेरे पूर्व जन्म के कर्मबन्ध ही हैं।' इस प्रकार वह भाग्यवादिनी बनकर उदारता का व्यवहार करती है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

८. क्षमा की वह प्रतिमूर्ति है। अपने माता-पिता के अपराधों के लिए वह अपने पति से क्षमा-याचना करती है। साथ ही, पति के द्वारा पिता को दिए गए बारह ग्रामों को पूर्ववत् रहने देने का अनुरोध करती है। आरामशोभा के हृदय की यह विशालता उसके चरित्र का सबसे बड़ा गुण कहा जा सकता है।

९. आरामशोभा के उदार हृदय में नाम मात्र भी क्रोध, ईर्ष्या आदि को स्थान नहीं है। वह अपनी बहिन विरूपा को तथा माता आदि सभी को क्षमा करने के लिए राजा से स्वयं याचना करती है।

इस प्रकार आरामशोभा के चरित्र में एक सुयोग्य एवं साहसी कन्या, धैर्य एवं क्षमायुक्त गृहिणी और पूर्ण वात्सल्यमयी माँ होने के गुणों के साथ-साथ धर्मपरायणता, सहिष्णुता, पूर्ण उदार हृदय एवं संसार के वैभव आदि से विरक्ति आदि अनेक सद्गुण पाए जाते हैं।

लोककथा-तत्त्व

लोकमानस तत्त्व—मानव-साधारण के मानस-पटल पर अंकित हो जाने वाली कथा को लोकमानस-तत्त्व कहते हैं। कथाओं में लोकमानस की सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति का रहना ही लोककथा-तत्त्व है। कथाकार जो कुछ भी कहता है तथा जो कुछ भी सुनता है, उसे वह समूह की वाणी बनाकर और समूह में घुल-मिलकर ही व्यक्त करता है। यही कारण है कि लोक-कथाओं में लोक-संस्कृति का वास्तविक प्रतिबिम्ब रहता है। जो कथाएँ लोकचित्त से सीधे उत्पन्न होकर सर्वसाधारण को आन्दोलित और प्रभावित करती हैं तथा जनता की बोली में लिखी जाती हैं, वे लोक-कथाओं के पद पर आसीन होने की अधिकारिणी होती हैं। लोक-चेतना का साहित्य अपनी मूल-प्रेरणा तो लोक-मानस से ग्रहण करता है, पर उसका ऊपरी ढाँचा आभिजात्य-कथाओं या साहित्यिक वातावरणों से निर्मित होता है।

लोक-कथाएँ मानव-जाति की आदिम-परम्परा, प्रथाओं और उसके विभिन्न प्रकार के विश्वासों का वास्तविक प्रतिनिधित्व करती हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समस्त विश्व में लोक-कथाओं का रूप प्रायः एक जैसा रहता है। लौकिक सौन्दर्य-बोध, सामान्य कथानक-रूढ़ियाँ एवं लौकिक विश्वास, विश्वलोक-कथाओं में समान रूप से पाये जाते हैं।

आरामशोभाकथा में लोक-कथातत्त्व—'आरामशोभाकथा' में लोक-कथा की उक्त परिभाषा पूर्णतया घटित होती है, इसमें लोक-धर्म, लोक-चित्त और लोक-भाषा ये तीनों ही तत्त्व विद्यमान हैं। अन्वेषण करने पर आरामशोभाकथा में लोक-कथा के निम्नलिखित कथा-तत्त्व उपलब्ध हैं—

१. प्रेम का अभिन्न पुट
२. गोचारण एवं नागदेव का वरदान
३. स्वस्थ श्रृंगारिकता
४. लोक-विश्वास
५. कुतूहल
६. मनोरंजन
७. दैवीय तत्त्व
८. आश्चर्य और अद्भुत तत्त्व
९. जनमानस का प्रतिफलन
१०. परम्परा की अक्षुण्णता।

'आरामशोभाकथा' में अग्निशर्मा की पुत्री विद्युत्प्रभा के साथ जितशत्रु राजा का प्रेम-विवाह वर्णित है। अतः प्रेम का पुट इस कथा में आद्यन्त व्याप्त है।

लोक-कथाओं में प्रायः गाय का प्रसंग पाया जाता है। यहाँ भी विद्युत्प्रभा गोचारण के लिए प्रतिदिन वन्यप्रदेश में जाया करती है। इसी गोचारण के अवसर पर उसे नागराज का दर्शन भी प्राप्त होता है और विपत्तिग्रस्त इस नागराज की प्राण-रक्षा करने के कारण विद्युत्प्रभा को एक ऐसी अलौकिक-शक्ति की उपलब्धि होती है, जिस के प्रभाव से मरुभूमि में भी एक सुन्दर वाटिका का निर्माण हो जाता है। अतः यह लोक-कथाओं का दूसरा तत्त्व है, जिसमें चमत्कारी बातों का वर्णन पाया

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाया है।

इस देश की प्राचीन प्रथाओं में नागपूजा एक प्रसिद्ध पूजा के रूप में प्रचलित थी। इसमें लोक-विश्वास यह था कि नागदेव अत्यन्त सुन्दर, शक्तिशाली एवं चमत्कारपूर्ण कार्यों को सम्पन्न करने वाले होते हैं। प्रस्तुत कथा के लेखक संघतिलक ने भी इस कथा के माध्यम से पुरातन लोक-विश्वासों का उद्घाटन किया है। नागदेव आरामशोभाकथा में आगे चलकर दैवीय कार्यों का सम्पादन करता है। वह एक ऐसी सुन्दर वाटिका का निर्माण करता है, जो कि मनुष्यों एवं पशु-पक्षियों को तो भोजन-पान एवं विश्राम देती ही है, साथ ही वरदान-प्राप्त आरामशोभा के साथ निरन्तर चलती है एवं उसके विश्राम के साथ विश्राम भी करती है। यही नहीं, वह नाना प्रकार की विपत्तियों से विद्युत्प्रभा की रक्षा करती रहती है। आराम (वाटिका) की विशेषता एवं सुन्दरता के कारण ही विद्युत्प्रभा का अपर नाम आरामशोभा पड़ जाता है।

विमाता का सौतेली सन्तान के साथ कैसा व्यवहार होता है और वह कहाँ तक उसे कष्ट देती है आदि बातें भी उक्त कथा से जानी जा सकती हैं। वस्तुतः लोक-कथाओं में विमाता के वर्ताव का वर्णन किसी न किसी रूप में अवश्य मिलता है। प्राकृत की अधिकांश कथाएँ लोक-मानस से प्रभावित हैं। इनमें लोकजीवन का मार्मिक चित्र पाया जाता है। अग्निशर्मा की द्वितीय पत्नी अपनी पुत्री विरूपा का विवाह जितशत्रु राजा के साथ करने के लिए नाना प्रकार के छल-प्रपंचों का संयोजन करती है। वह अपने इस अभीष्ट कार्य की सिद्धि के हेतु विद्युत्प्रभा को अनेक प्रकार के कष्ट भी देती है। वह छल द्वारा गर्भवती आरामशोभा (विद्युत्प्रभा) को अपने यहाँ बुला लेती है और पुत्र-प्रसव के बाद धोखे से उसे धक्का देकर एक गहरे कुएँ में गिरा देती है और अपनी पुत्री विरूपा को उसके स्थान पर पुत्र सहित राजधानी भेज देती है। आराम-शोभा के स्थान पर विरूपा को देखकर राजा को कुछ आशंका तो होती है पर उस की वह आशंका किसी प्रकार दूर कर दी जाती है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इधर, उस आरामशोभा को जैसे ही गहरे कुएँ में गिरा दिया जाता है वह तत्क्षण उस नागराज का स्मरण करती है, फलत: वह तत्काल वहाँ पहुँचकर आरामशोभा की रक्षा करता है एवं कुएँ में ही एक सुविधा-सम्पन्न तलगृह बनाकर उसे वहाँ रख देता है। इस प्रकार इस कथा में आद्यन्त लोककथा-तत्त्व व्याप्त हैं।

धर्म-श्रद्धा का वर्णन भी इस कथा में किया गया है। वास्तव में कथाकार का मूल उद्देश्य ही देव, शास्त्र एवं गुरु के प्रति श्रद्धा उत्पन्न कराना रहा है।

वीरभद्रसूरि के आगमन से राजा एवं रानी (आरामशोभा) को धर्मोपदेश श्रवण करने का अवसर प्राप्त हो जाता है। सूरीश्वर उनकी पूर्व भवावलि का वर्णन करते हैं, जिसमें अनेक प्रकार के रहस्यों का उद्घाटन होता है। रहस्योद्घाटन लोक-कथाओं का एक आवश्यक तत्त्व भी माना गया है। रहस्य से तात्पर्य गूढ़ (छिपे हुए) तत्त्वपूर्ण एवं तन्त्र-मन्त्र की उन शक्तियों से है, जिनमें गोपनीयता बहुत दूर तक प्रविष्ट रहती है। अभिप्राय यह है कि जिन बातों की जानकारी साधारण व्यक्तियों को नहीं हो और न ही इनका ज्ञान इन्द्रिय-प्रत्यक्ष के द्वारा सम्भव हो, उन्हें रहस्य कहा जाता है। संघतिलकसूरि ने इस कथा में पूर्वजन्म की कितनी ही गोपनीय शृंखलाओं का उद्घाटन किया है। आरामशोभा के चारों ओर वाटिका क्यों रहती है? नागदेव उसकी रक्षा क्यों करता है? वह प्रतिदिन अपने पुत्र से किस प्रकार मिलती है? आदि बातों का रहस्योद्घाटन कथा के अन्त में किया गया है। वस्तुत: लौकिकता से विमुख होकर जब किसी अज्ञात रहस्यमय अलौकिक शक्ति के प्रति राग, उत्सुकता, विस्मय, जिज्ञासा या लालसा उत्पन्न होती है तब रहस्योद्घाटन की स्थिति आती है। इस तरह सृष्टि का रहस्य एवं मानव का रहस्य इस कथा में उद्घाटित किया गया है।

कुतूहल और मनोरंजन-तत्त्व इस कथा में पूर्णतया समाविष्ट है। मरुभूमि का सुन्दर वाटिका के रूप में परिवर्तित होना स्वयं एक कुतूहल है। कथा में प्राय: यह जिज्ञासा रहती है कि आगे क्या हुआ? 'आगे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्या हुआ' की यह प्रवृत्ति आभिजात्य-कथाओं में भी पाई जाती है। पर इसका जितना आधिपत्य लोक-कथाओं में रहता है, उतना आभिजात्य-कथाओं में नहीं। कुतूहलवृत्ति के जनक लोक प्रचलित विश्वासों, रीति-रिवाजों, प्रथाओं और परम्पराओं का सुन्दर विवेचन यहाँ सहज ही देखने को मिल जाता है।

मनोरंजन-गुण भी इस कथा में कम नहीं है। मनोरंजन के अभाव में कथा में कथा-रस की प्राप्ति ही नहीं होती। नागराज का भागकर आना, विद्युत्प्रभा द्वारा उसकी रक्षा करना, नागराज का मानव-पर्याय के रूप में परिवर्तित होना, दिव्य-वाणी का सुनाई पड़ना ऐसे तत्त्व हैं, जो इस कथा में पूर्णतया मनोरंजन का समावेश करते हैं।

प्रस्तुत आरामशोभा कथा में अमानवीय (दैवीय) तत्त्व भी सम्मिलित हैं। अमानवीय से हमारा तात्पर्य उन कार्यों से है जिन्हें साधारणतया मनुष्य नहीं कर सकते। इन असम्भव एवं दुस्सह कार्यों को करने के लिए लोक-कथाओं में एक-दो पात्र इस प्रकार के कल्पित किए जाते हैं, जो मानवेतर कार्यों को कर दिखाते हैं। पशु-पक्षियों की बोली का समझना, रूप परिवर्त्तन कर लेना, असम्भव वातों की जानकारी प्राप्त कर लेना आदि घटनाएँ ऐसी हैं जिनका सम्वन्ध अमानवीय तत्त्व से है।

अन्धविश्वास भी इस कथा में वर्णित है। आदिमकाल से ही मानव-समाज में अनेक प्रकार के विश्वास इस प्रकार के हैं, जिनको तर्क और बुद्धि की तुला पर नहीं तौला जा सकता। इन अन्धविश्वासों का अस्तित्व इस कथा में भी उपलब्ध है। विषमिश्रित लड्डुओं को अमृत-मिश्रित बनाना, विद्युत्प्रभा का आरामशोभा के रूप में परिवर्त्तित होना, अन्धकूप में नागराज द्वारा आरामशोभा को प्रदत्त सभी प्रकार की सुख-सुविधाओं का होना आदि कथानक अन्धविश्वासमूलक हैं। पारिवारिक जीवन के चित्र, पूर्व-जन्म के संस्कार और फलोपभोग एवं साहस का निरूपण आदि लोक-कथा तत्त्व भी सहज रूप में पाए जाते हैं। अतः आरामसोहाकहा एक लोक-कथा है जिसे लेखक ने काट-छाँटकर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धर्म-कथा के साँचे में फिट करने का प्रयास किया है।

छन्द

कथाकार ने यद्यपि प्रस्तुत रचना गद्य में लिखी है, किन्तु उसने प्रसंगवश उसमें पद्यों के प्रयोग भी किए हैं, जो कथा के प्रवाह में सहायक तो हैं ही, साथ ही, पाठक को एकरसता की उबान से बचाकर कथा को सरसता एवं मनोरंजकता भी प्रदान करते हैं।

आरामसोहाकहा में केवल ३० पद्य उपलब्ध हैं, जिनमें से २८ पद्य प्राकृत में एवं २ पद्य संस्कृत में हैं। प्राकृत में यद्यपि गाथा-छन्द ही प्रधान माना गया है। किन्तु कवि ने उस गाथा-छन्द (पद्य संख्या—२, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, १८, १९, २०, २१, २३, २४, २५, २६, ३०) के अतिरिक्त शार्दूलविक्रीडित (पद्य-संख्या—१), पृथिवी (पद्य-संख्या-१६, १७), आर्या (पद्य-संख्या—३, २७ संस्कृत पद्य), गीतिका (पद्य-संख्या—२२), वसन्ततिलका (पद्य-संख्या—२८) एव वशस्थ (पद्य-संख्या—२९) जैसे छन्दों के भी प्रयोग किए हैं।

प्राकृत गद्य-काव्य में इस प्रकार के विविध छन्दों के प्रयोग नये ही प्रतीत होते हैं।

सूक्तियां एवं मुहावरे

काव्य में सूक्तियों एवं मुहावरों का वही महत्त्व है, जो आभूषणों में जड़े हुए नगों का। जिस प्रकार पन्ना, हीरा, मोती, माणिक्य आदि नगों से अलंकारों की शोभा बढ़ जाती है, उसी प्रकार सूक्तियों एवं मुहावरों से काव्य की शोभा द्विगुणित हो जाती है।

संघतिलकसूरि एक लोककवि थे। जन-साधारण की सुरुचियों का उन्होंने मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया था। अपने समय की कुछ लोकप्रिय सुरुचियों को सूक्तियों में बाँधकर तथा प्रचलित मुहावरो को प्राकृत-भाषा में निवद्ध कर उन्होंने उन्हें कुशलतापूर्वक प्रस्तुत किया है। उदाहरणार्थ—उनमें से कुछ इस प्रकार हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न छुट्टिज्जइ अवेइयस्स दुट्ठकम्मणो—अदृश्य दुष्ट कर्मों के फल से छुटकारा सम्भव नहीं।

कप्पदुमस्स बोरकरीराइ फलपेसणं—कल्पवृक्ष (-जैसे समृद्ध वृक्ष के लिए भेंट देने हेतु उस) के पास बबूल के फल भेजना। (२०)

वइरागरसस्स कायखंडमंडणं—वैराग्य रस में संलग्न व्यक्ति के शरीर का मण्डन करना। (२०)

मेरुस्स सिलायलेहिं दिढयरणं—शिलाखण्डों के द्वारा सुमेरु पर्वत को सुदृढ़ बनाना। (२०)

पज्जोयणस्स खज्जोयपोयउवमाणकरणं—सूर्य के लिए जुगनुओं के बच्चों के प्रकाश की उपमा देना। (२०)

दंभो कइदिणे छज्जइ—दम्भ कितने दिनों तक छिपाया जा सकता है? (३६)

सच्छंदा हि इत्थी खलेहिं खिसिज्जइ—स्वच्छन्द स्त्री निश्चित रूप से खलजनों के द्वारा फुसला ली जाती है। (५८)

सांस्कृतिक तथ्य

श्रमण-लेखकों की यह विशेषता रही है कि उन्होंने कथाओं के माध्यम से समकालीन संस्कृति, लोक-विश्वास एवं साहित्यिक परम्परा को अक्षुण्ण बनाए रखने के प्रयत्न तो किए ही, आचार-विचार, भोजन-पान, रहन-सहन, सामाजिक-समस्या, पारिवारिक-विषमताओं एवं धर्म-दर्शन आदि के प्रकाशन सम्बन्धी प्रसंग भी प्रस्तुत किए हैं। इन प्रसंगों के लिए अग्निशर्मा एवं विद्युत्प्रभा की दैनिकचर्या, विद्युत्प्रभा एवं सौतेली माता के पारस्परिक सम्बन्ध, पाटलिपुत्रनरेश जितशत्रु एवं आरामशोभा का रहस-सहन एवं आचार-विचार, वैवाहिक रीति-रिवाज, दहेज-प्रथा, नगर साज-सज्जा, जन्म-संस्कार, संघप्रधान वीरनन्द सूरि के अमृतमय उपदेश, स्वर्ग-नरक वर्णन आदि की चर्चाएँ ध्यातव्य हैं।

नागपूजा—नागदेवता की पूजा भारतीय लोक-धर्म का एक प्राचीन रूप है, जो पौराणिक आख्यानों में विविध रूप से मिलता है। श्रावण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शुक्ला पंचमी के दिन नागपंचमी का त्यौहार मनाया जाता है। उस दिन घर की दीवार को पोतकर उस पर संअन रखते हैं। इन संअनों की आकृतियाँ पक्षियों एवं सर्पों जैसी होती हैं। यह संअन शब्द वस्तुतः प्राकृत से निस्यूत है, जो संस्कृत के शकुनि से बना है। इन संअन-आकृतियों का मूल उद्देश्य वस्तुतः गरुड़ एवं सर्प के संग्राम को अभिव्यक्त करना रहा होगा।

वैदिक, जैन एवं बौद्ध धर्मों में नाग का सम्बन्ध उनके आराध्य देवों से सम्बन्धित है। वैदिक धर्म में जहाँ शिव एवं विष्णु के साथ उनका सम्बन्ध है, वहीं जैनियों के तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ का चिह्न भी नागदेव ही है। इसी प्रकार बौद्ध-जातकों में भी उसका उच्च स्थान निर्धारित किया गया है। ब्राह्मण-साहित्य में कहा गया है कि "इयं पृथिवी कद्रुः (शतपथ० ३।६।२।२), इयं वै पृथिवी सर्पराज्ञी (शतपथ० २।१।४।३०)" अर्थात् नागों की माता सुरसा पृथिवी की ही संज्ञा है। नागमाता कद्रू पृथिवी का रूप है। इसी प्रकार कृष्ण के कालियानाग-नथन एवं जनमेजय के नाग-यज्ञ से भी उसका महत्त्व जाना जा सकता है। कुछ विद्वान राजगृही के मणियार मठ (मणिनाग का मठ) का सम्बन्ध भी नागपूजा स्थल से जोड़ते हैं। भारतीय ही नहीं, दक्षिण-पूर्व एशिया तथा अफ्रिका, यूनान एवं अन्य विदेशी लोक-गाथाओं में भी नागदेव का स्मरण बड़े आदर के साथ किया गया है।

महाकवि संघतिलकसूरि ने भी नागपूजा के महत्त्व को एक नया आयाम दिया है। प्रारम्भ में उसे कुछ गारुडियों के द्वारा भयाक्रान्त प्रदर्शित किया गया है और विद्युत्प्रभा जैसी जीवन से निराश एवं उदास ब्राह्मणी कन्या से वह अपनी सुरक्षा की याचना करता हुआ प्रदर्शित किया गया है। स्वभाव से सरल एवं निष्कपट वह ब्राह्मण-कन्या भी सहज भाव से अपनी गोद में छिपाकर उसे गारुड़ियों से सुरक्षित कर लेती है। नागदेव उस कन्या के साहसिक कार्य से प्रसन्न होकर उसे ऐसी दिव्यवाटिका का वरदान देता है, जो निरन्तर उसके साथ चलती, उठती एवं बैठती है तथा उसे छहों ऋतुओं के फल-फूल प्रदान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

करती रहती है। उसके वृक्षों की सघन छाया सभी को मोहित करती रहती है। उस नागदेव के स्मरण मात्र से ही वह आरामशोभा घोर संकटों से छुटकारा भी पाती रहती है।

संघतिलक का यह आख्यान भले ही किसी लोककथा पर आश्रित अथवा कल्पना-प्रसूत हो, किन्तु उनकी अलौकिक एवं मौलिक कुशल सूझ-बूझ का ऐसा रोचक एवं सरस उदाहरण अन्यत्र नहीं मिलता। आबाल-वृद्ध नर-नारी समान रूप से इस कथानक का बड़ी ही रुचिपूर्वक रसास्वादन करते आए हैं।

भूगोल

संघतिलक गणि ने पूर्वाचार्यों की परम्परा के अनुसार ही अपनी रचना में कुछ भौगोलिक नाम भी प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने प्रधान नायिका के निवास-स्थान का वर्णन करने हेतु उसकी विस्तृत जानकारी देने के निमित्त उसकी अवस्थिति (Location), प्राकृतिक स्थिति (Flora and fauna), जन-स्थिति (Population) आदि का संक्षिप्त किन्तु सुन्दर वर्णन किया है।

विद्युत्प्रभा के जन्म-स्थान 'वलासक ग्राम' का पूर्ण परिचय देने हेतु लेखक ने बताया है कि वह जम्बूद्वीप स्थित भारतवर्ष के कुशार्त्त देश में स्थित था। जहाँ के नरनारी बहुत ही सुन्दर एवं समृद्ध थे। दुर्भाग्य से वलासक ग्राम के चारों ओर एक योजन-प्रमाण भूमि ऊसर थी। प्रतीत होता है कि यह प्रदेश सर्पबहुल था।

उक्त द्वीप, देश एवं ग्राम के अतिरिक्त लेखक ने पाटलिपुत्र, चम्पा-नगरी, चोड (चोल) देश एवं कोशल देश के उल्लेख भी किए हैं। प्रतीत होता है कि संघतिलक के समय में इन नगरियों एवं देशों का विशेष महत्त्व था।

पारिवारिक जीवन

संघतिलक यथार्थवादी विचारधारा के पोषक लेखक के रूप में सम्मुख आए हैं। इस कोटि के लेखक की यह विशेषता होती है कि वह

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपने इर्द-गिर्द जिस प्रकार के परिवारों को देखता है और उनकी जैसी परिस्थितियाँ होती हैं, उन्हीं का चित्रण वह कल्पित पात्रों के माध्यम से कर देता है।

विद्युत्प्रभा एक ब्राह्मण कन्या है। उसका परिवार अर्थविहीन होने पर भी सुखी एवं सन्तुष्ट वृत्ति का रहता है। उसके माता-पिता धार्मिक विचारधारा के रहते हैं। संयोग से उसकी माता का स्वर्गवास हो जाता है और उसी के बाद से उसका जीवन विषम हो जाता है। सभी प्रकार के गृहकार्यों के अतिरिक्त गोदोहन एवं गोचारण उसको थका देने वाला अनिवार्य दैनिक कार्यक्रम बन जाता है।

निरन्तर की थकावट से बचने तथा घर का उदास वातावरण बदलने की दृष्टि से विद्युत्प्रभा अपने पिता से दूसरा विवाह कर लेने का आग्रह करती है। पिता दूसरा विवाह कर भी लेता है किन्तु आशाओं के विपरीत उसकी सौतेली माता अत्यन्त आलसी, बहानेबाज, छली-कपटी, ईर्ष्यालु एवं खाने-पीने की लालची निकल जाती है। इस कारण, जिस सुख-सुविधा के लिए यह विवाह रचाया गया था, स्थिति ठीक उसके विरुद्ध ही बन जाती है। विद्युत्प्रभा के कार्य उसके आते ही दुगुने हो जाते हैं और उसे प्रतिदिन गाली-गलौज भी मिलने लगती है।

विद्युत्प्रभा के विवाह के बाद भी उसकी सौतेली माता ने ईर्ष्यावश उसे किन-किन प्राण-लेवा कष्टों में डाला, वे सब इस कथानक से स्पष्ट हैं। सौतेली माता के दुर्व्यवहारों का लेखक ने बहुत ही स्वाभाविक चित्रण किया है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषयानुक्रम

	गद्यांश-संख्या
बलासक ग्राम का वर्णन	१
नायिका विद्युत्प्रभा का वर्णन	२-३
मातृ-वियोग एवं गौ-सेवा	३
सौतेली माता का दुर्व्यवहार	४
पूर्वकृत कर्मफल	४-५
वन में नागदेव से भेंट	६-७
संकटग्रस्त नागदेव की सुरक्षा	७-११
दिव्य वाटिका और उसके चमत्कार	१२
वाटिका में पाटलिपुत्रनरेश का आगमन	१३
सेना का वर्णन	१३-१४
नरेश का विद्युत्प्रभा पर आकर्षित होना	१५
विद्युत्प्रभा का विवाह	१६
विद्युत्प्रभा का आरामशोभा के रूप में नाम-परिवर्तन एवं पाटलिपुत्र आगमन	१७-१८
सौतेली माता के कुरूपा पुत्री का जन्म	१९
सौतेली माता द्वारा विष-मिश्रित लड्डुओं को विद्युत्प्रभा के पास भेजने का प्रसंग	२०-२५
राजा द्वारा आरामशोभा की विदाई की अस्वीकृति	२६
सौतेली माँ द्वारा दूसरी-तीसरी बार विष-मिश्रित मिष्ठान का प्रेषण तथा नागकुमार द्वारा उसमें परिवर्तन	२७-२८
आरामशोभा का नैहर पहुँचना	२९
आरामशोभा को पुत्ररत्न की प्राप्ति	३०
नागकुमार द्वारा आरामशोभा की कुंए के भीतर सुरक्षा	३१
सौतेली माता का छल-प्रपंच तथा राजा के मन में संदेह होना	३२-३६
पुत्र-विरह से दुःखी आरामशोभा	३७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नागदेव द्वारा आरामशोभा की पुत्र से भेंट कराना	३८
कृतिम आरामशोभा की कुटिलता	३९
आरामशोभा को प्राप्त वरदान के प्रभाव की समाप्ति	४०-४१
विरूपा और उसके माता-पिता को राजा द्वारा दण्डित किये जाने की घोषणा किन्तु आरामशोभा के अनुरोध पर उन्हें क्षमादान	४२-४४
उद्यानपाल द्वारा वीरचन्द सूरि के आगमन की सूचना	४५-४६
आरामशोभा के पूर्वजन्म का वृत्तान्त-कथन	४७
चम्पानगरी के सेठ कुलंधर का वर्णन	४८
कुलंधर की आठवीं पुत्री निर्भाग्या	४९
कुलंधर की चोडदेशवासी नन्दन से भेंट	५०
नन्दन के साथ निर्भाग्या का विवाह-प्रसंग	५१-५५
उज्जयिनी में निर्भाग्या को अकेली छोड़कर नन्दन का प्रस्थान	५६
असहाय निर्भाग्या का रुदन—विलाप	५७
सेठ मणिभद्र के यहाँ निर्भाग्या को आश्रय	५८-६१
मणिभद्र द्वारा विशाल जिनालय का निर्माण	६२
छत्रत्रय वर्णन	६२
निर्भाग्या द्वारा देव-गुरु की सेवा	६३
निर्भाग्या के शील का प्रभाव—शुष्क देव-आराम का हरा-भरा हो जाना	६४-६५
निर्भाग्या का आदर-सम्मान	६६
निर्भाग्या द्वारा वैराग्य-धारण	६७
निर्भाग्या का विद्युत्प्रभा के रूप में जन्म	६८
पूर्वजन्म कृत कर्मों के फल का वृत्तान्त	६९-७०
आरामशोभा की वैराग्यवृत्ति	७१
राजा जितशत्रु का प्रव्रजित होना	७२
आरामशोभा और जितशत्रु को स्वर्ग की प्राप्ति	७३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

5252

सिरिसंघतिलयायरियविरइया

आरामसोहाकहा

[१] इहेव जम्बूरुक्खालंकियदीवमज्झट्ठिए अक्खंडछक्खंड-मंडिए बहुविहसुहनिवहनिवासे भारहे वासे असेसलच्छिसंनिवेसो अत्थि कुसट्टदेसो। तत्थ पमुइयपक्कीलियलोयमणोहरो उग्गविग्ग-हुव्व गोरिसुंदरो सयलधन्नजाईअभिरामो अत्थि बलासओ नाम गामो। जत्थ य चाउद्दिसिं जोयणपमाणे भूमिभागे न कयावि रुक्खाइ उग्गइ।

[२] इओ य तत्थ चउव्वेयपारगो छक्कम्मसाहगो अग्गि-सम्मो नाम माहणो परिवसइ। तस्स सीलाइगुणपत्तरेहा अग्गिसिहा नाम भारिया। ताणं च परमसुहेण भोगे भुंजंताणं कमेण जाया एगा दारिया। तीसे 'विज्जुप्पह' त्ति नाम कयं अम्मापियरेहिं—

जीसे लोलविलोयणाण पुरओ नीलुप्पलो किंकरो,
पुन्नो रत्तिवई मुहस्स वहई निम्मल्ललीलं सया।
नासावंसपुरो सुअस्स अपडू चंचूपुडो निज्जरा,
रूवं पिक्खिय अच्छरासुवि धुवं जायंति ढिल्लायरा॥१॥

[३] तओ कमेण तीसे अट्ठवरिसदेसियाए दिव्ववसा रोगायंकाभिभूया माया कालधम्ममुवगया। तत्तो सा सयलमवि घरवावारं करेइ। उट्ठिऊण पभायसमए विहियगोदोहा कयघर-सोहा गोचारणत्थं बाहिं गंतूण मज्झण्हे उण गोदोहाइ निम्मिय जणयस्स देवपूयाभोयणाइं संपाडिऊण सयं च भुत्तूण पुणरवि गोणीओ चारिऊण संझाए घरमागंतूण कयपाओसियकिच्चा खणमित्तं निद्दासुहं सा अणुहवइ। एवं पइदिणं कुणमाणी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

घरकम्मेहिं कयत्थिया समाणी जणयमन्नया भणइ—'ताय ! अहं घरकम्मुणा अच्चंतं दूमिया, ता पसिय घरणिसंगहं कुणह ।'

[४] इय तीइ वयणं सोहणं मन्नमाणेण तेण एगा माहणी विसद्दुम-सारणी सगहिणी कया । सावि सायसीला आलसुया कुडिला तहेव घरवावारं तीए निवेसिय सयं ण्हाणविलेवणभूसण-भोयणाइभोएसु वावडा तणमवि मोडिऊण न दुहा करेइ ।

तओ सा विज्जुपहा विज्जुव्व पज्जलंती चिंतेइ—'अहो ! मए जं सुहनिमित्तं जणयाओ कारियं तं निरउव्व दुहहेउयं जायं । ता न छुट्टिज्जई अवेइयस्स दुट्ठकम्मुणो, अवरो उण निमित्त-मित्तमेव होई ।' जओ—

सव्वो पुव्वकयाणं कम्माणं पावए फलविवागं ।
अवराहेसु गुणेसु य निमित्तमित्तं परो होइ ॥२॥

यस्माच्च येन च यथा च यदा च यच्च,
यावच्च यत्र च शुभाशुभमात्मकर्म्मं ।
तस्माच्च तेन च तथा च तदा च तच्च,
तावच्च तत्र च कृतान्तवशादुपैति ॥३॥

[५] एवं सा अमणदुम्मणा गोसे गावीओ चारिऊण मज्झण्हे अरसविरसं सीयलं लुक्खं मक्खियासयसंकुलं भुत्तुद्धरियं भोयणं भुंजइ एवं दुक्खमणुहवंतीए तीए बारसवरिसा वइक्कंता ।

[६] अन्नंमि दिणे मज्झण्हे सुरहीसु चरंतीसु गिम्हे उण्हकरतावियाए रुक्खाभावाओ पाओ च्छायावज्जिए सतिण-प्पएसे सुवंतीए तीए समीवे एगो भुयंगो आगओ—

जो उण अइरत्तच्छो संचालियजीहजामलो कालो ।
उक्कडफुंकाराख भयजणओ सव्वपाणीणं ॥४॥

[७] सो य नागकुमाराहिट्ठियतणु माणुसभासाए सुललिय-पयाए तं जग्गवेइ, तप्पुरओ एवं भणइ य—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भयभीओ तुह पासं, समागओ वच्छि ! मज्झ पुट्ठीए ।
जं एए गारुडिया लग्गा बंधिय गहिस्संति ॥५॥
ता नियए उच्छंगे सुइरं ठाविएवि पवरवत्थेणं ।
मह रक्खेसु इहत्थे खणमवि तं मा विलंबेसु ॥६॥
नागकुमाराहिट्ठिय-काओ गारुडियमंतदेवीणं ।
न खमो आणाभंगं काउं तो रक्ख मं पुत्ति ! ॥७॥
भयभंतिं मुत्तूणं वच्छे ! सम्मं कुणेसु मह वयणं ।
तत्तो सावि दयालू तं नागं ठवइ उच्छंगे ॥८॥

[८] तओ तंमि चेव समए करठवियओसहिवलया तप्पिट्ठओ चेव तुरिय-तुरियं समागया गारुडिया, तेहिं पि सा माहणतणया पुट्ठा, 'बाले ! एयंमि पहे कोवि गच्छंतो दिट्ठो गरिट्ठो नागो ?' तओ सावि पडिभणइ—'भो नरिंदा ! किं मं पुच्छेह ? जं अहमित्थ वत्थछाइयगत्ता सुत्ता अहेसि ।'

[९] तओ ते परुप्परं संलवंति । जइ एयाए बालियाए तारिसो नागो दिट्ठो हुत्थो तो भयवेविरंगी कुरंगीव उत्तट्ठा हुत्था । अओ इत्थ नागओ सो नागो । तयणु ते अग्गओ पिट्ठओ य पलोइय कत्थवि अलहंता हत्थेण हत्थं मलंता दंतेहिं उट्ठसंपुडं खंडंता विच्छायवयणा पडिनियत्तिऊण गया सभवणेसु गारुडिया ।

[१०] तओ तीए भणिओ सप्पो—'नीहरसु इत्ताहे, गया ते तुम्ह वेरिया ।' सोवि तीए उच्छंगाओ नीहरिऊण नागरूव-मुज्झिऊण चलंतकुंडलाहरणं सुररूवं पयडिय पभणेइ—'वच्छे ! वरेसु वरं जं अहं तुहोवयारेण साहसेण य संतुट्ठम्हि ।' सावि तं तहारूवं भासुरसरीरं सुरं पिच्छिऊण हरिसभरनिब्भरंगी विन्नवेइ ताय ! जइ सच्चं तुट्ठोसि, ता करेसु मज्झुवरिच्छायं, जेणायवेणा-परिभूया सुहंसुहेण च्छायाए उपविट्ठा गावीओ चारेमि ।'

[११] तओ तेण तियसेण मणंमि वीसंमियं—'अहो ! एसा सरलसहावा वराई जं ममाओवि एवं मग्गइ । ता एयाए एयंपि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अहिलसियं करेमि' त्ति तीए उवरि कओ आरामो महल्लसालद्दुमफुल्लगंधंधपुप्फंधयगीयसारो च्छायाभिरामो सरसप्फलेहिं पीणेइ जो पाणिगणे सयावि। तत्तो सुरेण तीइ पुरो निवेइयं—'पुत्ति ! जत्थ जत्थ तुमं वच्चिहिसि तत्थ तत्थ महमाहप्पाओ एस आरामो तए सह गमिही। गेहाइगयाए तुह इच्छाए अत्ताणं संखेविय च्छत्तुव्व उवरि चिट्ठिस्सइ। तुमईए उण संजायपओयणाए आवइकाले अहं सरेयव्वु' त्ति जंपिय गओ सट्ठाणं सो नागकुमारो।

[१२] सावि तस्सारामस्सामयरससरसाणि फलाणि जहिच्छं भुंजिय विगयच्छुहतण्हा तत्थेव ठिया सयलं दिणं। रयणीए उण गोणीओ वालिऊण पत्ता नियमंदिरं। आरामोवि तीए गिहं च्छाइऊण समंतओ ठिओ। जणणीए उण सा वुत्ता—'पुत्ति ! कुणसु भोयणं,' तओ तीए वज्जरियं—'नत्थि मे अज्ज खुह' त्ति उत्तरं काऊण सा नियसयणीए निद्दासुहमणुहवइ। जाए पच्चूससमए सा गावीओ गहिय तहेव गयारण्णं आरामोवि तप्पिट्ठीए गओ। एवं कुव्वंतीए तीए अइक्कंताणि कइवइदिणाइं।

[१३] एगया मज्झण्हे सुहप्पसुत्ताए सिरिपाडलपुराहिवो चउरंगबलकलिओ विजयजत्ताए पडिनियत्तो जियसत्तु नाम राया आगओ तत्थ। तस्सारामस्स रमणिज्जयाए अक्खित्तचित्तो मंतिं खंधावारनिवासत्थमाइसइ। नियासणं च चारुचूयतरुतले ठाविय सयमुववसिइ। सिन्नंपि तस्स चउद्दिसिंपि आवासेइ। अविइ—

तरलतरंगवलच्छा बज्झंति समंतओ य तरुमूले।
कविकालं विज्जंति पल्लाणज्जुया य साहासु ॥९॥
बज्झंति निविडथुडपायवेसु मयमत्तदंतिपंतीओ।
वसहकरहाइवाहण परंपराओ ठविज्जंति ॥१०॥

[१४] तम्मि य समए सिन्नकोलाहलेण विज्जुपहा विगयनिद्दा समाणी उट्ठिऊण करहाइपलोयणुत्तट्ठाओ गावीओ दूरंगया—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ओ पलोइय तासिं वालणट्ठा तुरियतुरियं रायाइलोयस्स पिक्खंतस्सवि पहाविया। तीए समं च करभतुरियाइसमेओ आरामोवि पत्थिओ। तओ ससंभंतो राया सपरियणो उट्ठिओ, अहो किमेयमच्छरियं ति पुच्छइ मंतिं, सोवि जोडियकरसंपुडो रायं विन्नवेइ—'देव ! अहमेवं वियक्केमि, जइओ पएसाओ विगयनिद्दामुद्दा उट्ठिऊण करसंपुडेणं नयणे चमढंती उट्ठित्ता पहाविया एसा बाला। इमीए सद्धिं आरामोवि, ता माहप्पमेय-मेईए चेव संभाविज्जइ। एसा देवंगणा वि न संभाविज्जइ, निमेसुम्मेसभावेण नूणमेसा माणुसी।'

[१५] तओ रण्णा वुत्तं—'मंतिराय ! एयं मे समीवमाणेह।' मंतिणावि धाविऊण सद्दो कओ। सावि तस्सद्दस्सवणेण आराम-सहिया तत्थेव ठिया। तओ 'एहि' त्ति मंतिणा वुत्ता। सा पडि-भणइ—'मम गावीओ दूरं गयाओ।' तओ मंतिणा नियअस्सवारे पेसिऊण आणावियाओ गावीओ। सावि आरामकलिया रायसयासमाणीया। राया वि तीए सव्वमवि चंगमंगमवलोइय 'कुमारि' त्ति निच्छोय साणुराओ मंतिसंमुहमवलोएइ। तेणावि रण्णो मणोभिप्पायं नाऊण वज्जरिया। 'विज्जुपहा !—

नमिरनरेसरसेहरअमंदमयरंदवासियक्कमग्गं ।
रज्जसिरिइ सव्वक्की होऊण इमं वरं वरसु ॥११॥

[१६] तओ तीए साहियं—'नाहं सवसा किंतु जणणिजण-याणमायत्ता।' तओ मंतिणा उत्तं—'को ते पिया ? कत्थ वसइ ?' तीए वि संलत्तं—'इत्थेव गामे अग्गिसम्मो माहणो परिवसइ।' तओ मंति तत्थ गमणाय रण्णा आइट्ठो। सोवि गामे गंतूण तस्स घरे पविट्ठो। तेणावि सागयवयणपुरस्सरं आसणे निवेसिऊण भणिओ—'जं करणिज्जं तं मे पसीय आइसह।'

[१७] अमच्चेण भणियं—'तुम्हं जइ का वि कन्नगा अत्थि, ता दिज्जउ अम्ह सामिणो।' तेणावि 'दिन्न' त्ति पडिस्सुयं, जं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अम्ह जीवियमवि देवस्स संतियं किं पुण कन्नग त्ति ?' तओ अमच्चेण भणियं—'तुमं पायमवधारेसु देवस्स पासे'। सोवि य रायसमीवं गंतूण दिन्नासीवयणो, मंतिणा बाहरियं वुत्तं, तो रण्णा सहत्थदिन्नासणे उवविट्ठो, भूवइणा वि कालविलंबमसहमाणेण गंधव्वविवाहेण सा परिणीया। पुव्विल्लयं नामं परावत्तिऊण 'आरामसोहं' ति तीए नामं कयं। माहणस्स वि दुवालस गामे दाऊण पणइणिं चारामसोहं हत्थिखंधे आरोविऊण सनयरं पइ पत्थिओ पत्थिवो पमोयमुव्वहंतो—

कप्पलइव्व इमीए लंभेण निवो कयत्थमप्पाणं।
मन्नइ अहवा वंछियलाहाओ को न तूसेइ ?॥ १२॥
सिंगारतरंगतरंगिणीइ दिव्वाणुभावकलियाए।
किं चुज्जं भूवइणो हरियं हियय तया तीए॥ १३॥

[१८] तओ मंचाइमंचकलियं निवेसियकालागुरुकुंदुरुक्क-तुरुक्कधूवमघमघंतघडियं उब्भामियधयवडालोयं उल्लासियवं-दणमालं तियचउक्कचच्चरचउम्मुहपयट्टियअउव्वनाडयं बहुठाण-ठवियपुण्णकलसं वण्णिज्जंतो आरामसोहाइसयसहयरामचुज्ज-विलोयणुप्फुल्लविलोयणनलिणेहिं नरनारीगणेहिं, पणइणीक-लिओ पाडलिपुरं पविट्ठो महाविभूइए महाराओ। सावि पुढो पासाए ठाविया, आरामो वि तीए पासायमावरिय समंतओ ठिओ दिव्वाणुभावेण। राया वि परिहरियासेसवावारो तीइ समं भोए भुंजंतो दोगुंदुगसुरेवि अवमन्नंतो निमेसमित्तं व कालम-वक्कमइ।

[१९] इओ य आरामसोहा—सवक्किमायाए धूया जाया, कमेण जुव्वणमणुपत्ता, तं तहावत्थं दट्ठूण दुट्ठा तज्जणणी एवं चिंतेइ—'जइ केणावि पओएण आरामसोहा मरइ, ता राया तीइ गुणक्खित्तचित्तो मम पुत्तिमेयं परिणेइ। तओ य मम मणो-रहभूरुहो सहलो होइ' त्ति परिभाविऊण तीए नियदइओ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वाहरिओ—'नाह ! वच्छाए परिणीयाए बहुकालो वइक्कंतो, अओ तीसे कए किंपि भक्खभुज्जाइयं पेसिउं जुज्जइ, एसावि पिउहरपाहुडेण मणो रंजिज्जइ ।'

[२०] तओ भट्टेण भणियं—'पिए ! तीए न किंपि ऊणय, परमहमेयं वियाणेमि जं कप्पदुमस्स बोरकरीराइ फलपेसणं, वइरागरसस्स कायखंडमंडणं, मेरुस्स सिलायलेहिं दिढयरणं, पज्जोयणस्स खज्जोयपोयउवमाणकरणमणुचियं होइ । तहा तीए अम्हाण पाहुडपेसणं, परमेस विसेसो—जं रायलोओ मुहे हत्थं दाऊण उवहसिस्सइ ।' तओ तीए पावाए संलत्तं—'नूणं सा नो ऊणा परमम्हाणं निव्वुई होइ' । तओ तीए अग्गहं नाऊण माहणेणवि 'तह' त्ति पडिवन्नं ।

[२१] तओ तीए हरिसियमणाए बहुदव्वसंज्जोएण निम्मिया सिंहकेसरीमोदगा, भाविया य महुरयेण, पक्खित्ता य नवकलसे, तम्मुहं मुद्दिऊण तोए भत्ता विन्नतो—'मा पंथे कोवि पच्चवाओ होउ तो तुमं सयं गहिय, वच्चसु ।' तओ वेयजडो बंभणो मिढ-सिंगंव कुडिलं तीए मणं अमुणंतो तं घडं सिरे करिय जा पत्थिओ ताव तीए भणियं—'एयं पाहुडं आरामसोहाए चेव दाऊण सा भणियव्वा—वच्छे ! तुमए चेव एयं भुत्तव्वं, न अन्नस्स दायव्वं, मा मम एयस्स विरूवत्तेण रायलोओ हसउ' त्ति सो वि 'तह' त्ति पडिवज्जिय पत्थिओ ।

[२२] मंदपयपयारेण य वच्चंतो संझाए ठाऊण सयणसमए तं घडं ओसीसए दिंतो कइवईदिणेसु पत्तो पाडलिपुत्तासन्न-महल्लवडपायवस्स तले । तत्थ तं घडं उस्सीसए दाऊण सुत्तो । इत्थंतरे तत्थ दिव्वजोगेण कीलणत्थमागएण तेण नागकुमारेण दिट्ठो सो बंभणो, चिंतियं च—'को एस मणुसो ? कलसम्मि य किमत्थि वत्थु ?' त्ति नाणं पउंजिय नाओ सयलोवि तीए पावाए बंभणीए वुत्तंतो—'अहो ! पिच्छह सवत्तिमाउए दुट्ठ-चिट्ठियं, जं तीए सरलसहावाए एरिसं ववसियं, परं मइ विज्जमाणे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मा कयावि इमीए विरूवं होउ' त्ति वोमंसिय तेण विसमोयगे अवहरिय अमयमोयगेहिं भरिओ सो कलसो।

[२३] तओ सो गोसे सुत्तविउद्धो उट्ठिऊण गओ कमेण रायदुवारं। पडिहारनिवेइओ य रायसगासं गंतूण दिन्नासीसो पाहुडघडं रायवामपासट्ठियाए समप्पेइ आरामसोहाए। तओ तेण भणिओ राया—'जहा, महाराय ! विन्नत्तं वच्छामाउयाए जमेयं पाहुडयं मए जारिसं तारिसं जणणीनेहेण पेसियं, अओ पुत्तीए चेव भुत्तव्वं, नन्नस्स दायव्वं, जहाहं रायलोयमज्झे न हसणिज्जा होमि, त्ति मणेच्छणो न धरियव्वो।

[२४] तओ रण्णा निरिक्खियं देवीए मुहकमलं, तीए वि दासीए सिरंमि दाऊण सभवणे पेसिओ कलसो। माहणो वि कणयरयणवसणदाणेण संतोसिओ रण्णा। सयं अत्थाणाओ उट्ठिऊण गओ देवीए गिहं। तत्थ सुहासणासीणो विन्नत्तो आरामसोहाए राया—

पिययम ! करिय पसायं नियनयणे निअह इत्थ कलसंमि।
अवणिज्जइ जह मुद्दा इय सुच्चा भणइ भूवो वि ।। १४।।

दइए ! मह मणदइए ! मा हियए कुणह किंपि कुवियप्पं।
तं चेवम्हपमाणं ता उग्घाडेसु घडमेयं ।। १५ ।।

[२५] तओ तं घडं उग्घाडंतीए तीए को वि दिव्वो माणुस्सलोयदुल्लहो परिमलो समुल्लसिओ, जेण सयलंपि रायभवणं महमहियं। तो राया महप्पमाणे मोयगे दट्ठूण परितुट्ठो भुंजंतो य तप्पसंसं कुणेइ। भणइ य—'मए रण्णा वि होऊण एयारिसासरिसमोयगासायणं कयावि न कयं।' तओ आरामसोहं पइ जंपइ नरवरो—'एयमज्झा इक्किक्कं मोयगं भइणीणं कए पेसह।' तीए वि रायाएसो तहेव कओ, तओ रायलोए तज्जणणीए महई पसंसा जाया—'अहो सा विन्नाणसालिणी, जीए एरिसा देवाण वि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दुल्लहा मोयगा काऊण पेसिया।' इय तप्पसंसं सोऊणारामसोहा परमं संतोसं गया।

[२६] एयम्मि समए अग्गिसम्मेण विन्नतो राया—'देव ! पिउहरं पेसह मे पुत्तिगं, जहा माउए मिलिऊण थोवकालेणवि तुम्ह पासमुवेइ। तओ रण्णा सो पडिनिसिद्धो, जओ—'रायभारियाओ न मत्तंडमंडलमवि पलोइउ लहंति। किं पुण तत्थ गमणं ति' भणिओ भट्टो गओ सगिहं, भारियाए निवेइयं सयलं पि तेण सरूवं। तओ सा पावा वज्जाहयव्व चिंतिउं लग्गा, 'हंत ! मह उच्छूपुप्फं व जाओ निप्फलो उवक्कमो। ता नूणं न मणहरो महुरो।'

[२७] तओ कइवयदिणपज्जंते पुणोवि हालाहलमोसियाणं फीणियाणं करंडयं दाऊण तहेव तीए विसज्जिओ नियदइओ। पुव्वजुत्तीए चेव तेणेव सुरेण हालाहलमवहरियं, तहेव तीसे पसंसा जाया, पुणो वि तइयवेलं कयपच्चयतालउडभावियमंडियाहिं पडिपुण्णं करंडयं दाऊण बंभणो भणिओ तीए—'वच्छा, संपयमावन्नसत्ता सह चेव आणेयव्वा। जहा इत्थ पढमो पसवो होइ, जइ राया कहमवि न पेसेइ, तओ तए बंभणत्तं दंसणीयंति।'

[२८] तव्वयणमंगीकाऊण भट्टो मग्गे गच्छंतो सुत्तो वडपायवस्स हिट्ठा। देवेण वि पुव्वंव अवहडो तालउडो, तओ पुव्वजुत्तीए पुत्तीए पाहुडं दाऊण राया तेण विन्नत्तो—'पुत्तिं मम घरे पेसह।' तओ तव्वयणं मणयंपि राया जाव न मन्नइ। ताव सो जमजोहसहोयरिं छुरिं उदरोवरि धरिय वाहरइ—'जइ पुत्तिं न पेसिस्सह, ता अप्पघायं करिस्सामि।' तओ राया तन्निच्छयं मुणिऊण महया परिवारेण परियरियं मंतिणा सहारामसोहं पेसेइ।

[२९] तओ अमुणियतप्पुण्णपगरिसा आरामसोहमागच्छंतिं सुणिय सवत्तिमाया सहरिसा नियमंदिरपिट्ठदेसे महंतयं कूवयं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खणाविऊण किंपि पवंचं मणे भाविऊण तम्मज्झगयभूमिहरए नियधूयं ठवेइ। अह समागया आरामसोहा सपरियणा, सवत्तिमाया वि तीए पुरो नियमभिप्पायमप्पयडंती किंकरिव्व कज्जाइं करिंती चिट्ठइ।

[३०] अह संजाए पसवसमये सुरकुमराणुकारं सा पसूया कुमारं। अन्नया विहिवसओ दूरट्ठिए परियणे समीवट्ठियाए सवत्तिमायाए कायचिंतानिमित्तं नीया आरामसोहा पच्छिमदुवारं, सावि तत्थ कूवं पलोइऊण भणइ—'अम्मो! कया कारविओ? एस अउव्वो कूवो।' तओ सा परमपिम्ममिव पयडंती साहइ—'वच्छे! तुज्झागमणं नाऊण मए एस कराविओ। मा कया वि दूरओ नीरे आणिज्जमाणे विसाइसंकमो हुज्जा। तओ सा आरामसोहा कोऊहलेण कूवतलं पलोयंती तीए दुट्ठाए अणुल्लहिययाए पणुल्लिया अहोमुहा चेव पडिया।

[३१] तम्मि समए तीए आवयपडियाए सो नागकुमारसुरो समरिओ, तेणावि सुरेण पयडीभूएण करसंपुडेणं अद्धंतराले चेव सा पडिच्छिया। कूवंतरे चेव पायालभवणं विउव्विय ठाविया। आरामो वि तत्थेव देवप्पभावाओ ठिओ सुरोवि बंभणीए उवरि कोवं कुणंतो 'मा यत्ति' भणिय तीए उवसामिओ गओ सट्ठाणं।

[३२] तओ तीए बंभणीए पमुइयाए तप्पल्लंके णवप्पसूयत्ति नियधूया सुवारिया। खणंतरे तप्पडिचारियाओ समागयाओ तं अप्पलावण्णं किंपि सरिसागारं दट्ठूण धसक्कियहिययाओ जंपन्ति—'सामिणी! संपइ किमन्नारिसीव भगवई पलोइज्जइ?'

[३३] सापि साहरइ—'किंपि न मुणेमि, परं मह देहो न सत्थावत्थो। तओ ताहिं भयभीयाहिं तज्जणणीए बंभणीए पुरो निवेइयं। तओ सावि पडुकूडकवडनाडयनडिया करेहिं हिययं ताडयंती पलविउं लग्गा। हद्धी, दुट्ठदिव्वेणं मुट्ठा, जं वच्छा अन्नारिसरूवा दीसइ, कहं रण्णो मुहं दक्खविस्सं? तओ रायभएण विसन्नाओ परिचारियाओ चिट्ठंति।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

[३४] अह तम्मि समए निवइसमाइट्ठो समागओ मंती। तेणवि भणियं—'जं देवो आणवेइ—देवीसहियं कुमारं सिग्घमाणेऊण मह मेलह' त्ति। तव्वयणसवणाणंतरं कया सयलावि पत्थाणसामग्गी, तम्मि अवसरे परिवारेण पुच्छिया देवी—'कत्थ आरामो ?' 'अज्जवि नागच्छइ', सा भणइ—'कूवए नीरपाणट्ठं मए ठाविओ, पच्छा आगमिस्सइ।'

[३५] तओ तीए सह पत्थिऊण परियणो पाडलिपुत्ते पत्तो। बद्धाविओ निवो, तेणावि पमुइयमणेण पयट्टाविया हट्टसोहा, पारद्धं वद्धावणयं, सयं संमुहगमणेण दिट्ठा देवी तणओ य, तओ पियाए अन्नारिसं रूवं निरूविऊण संभंतेण राइणा पुट्ठं—'अहो !! अन्नारिसिच्चिय तुह तणुसिरी निरूविज्जइ, तत्थ को हेउ ?' तओ दासीहिं विन्नतं—'महाराय ! एयाए पसूयाए दिट्ठिदोसेण पसूइरोगेण वा अन्नारिसं व रूवं संवुत्तं, न सम्मं जाणेमो।' तओ राया सुयजम्मपमुइओवि दइयावइयरसवणओ विच्छाओ जाओ। तहा वि धीरत्तमवलंविऊण राया तीए सह पुरं पविट्ठो।

[३६] एगया सा भणिया रण्णा—'पिए ! सो तुह सया सहयरो आरामो किं न दीसइ ?' तीए वि संलत्तं—'अज्जउत्त ! पच्छा नीरं पियंतो कूवे वट्टइ, समरिओ संतो समागमिही।' राया वि जहा जहा तीए सव्वंगं पासइ, तहा तहा संदेहपिसाएण अक्कमिज्जइ, किमेसा सा अन्ना, वा कावि ? अन्नया सा वुत्ता रण्णा—'आणेह तमारामं, मणाभिरामं।' सावि जंपइ—'पियमम ! पच्छावे, आणिस्सं।' सविसेसं रायमणंमि आसंका जाया।

[३७] अहारामसोहाए सो सुरो विन्नत्तो—'ताय ! सुयविरहो मं दढं पीडेइ, ता पसीय तहा कुणइ, जहा वच्छं पिच्छामि।' तओ सा सुरेण आइट्ठा—'जइ एवं ता वच्च मम माहप्पेण, परं पुत्तं पासिऊण सिग्घमागच्छेसु।' तीए वि 'तह' त्ति तव्वयणमंगीकयं। तओ पुणोवि सा सुरेण साहिया—'जइ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तत्थ गया तुमं सूरुग्गमं जाव चिट्ठिहिसि, तओ परं मह दंसणं तुह न हविस्सइ, एस उण संकेओ—जया नियकेसपासाओ मयनागं पडियं पिच्छिहिसि, तओ परं न तुह मह दंसणं होही।' तीएवि जंपियं—'एयमवि होउ, जइ इक्कवारं कहंपि पलोएमि तणयवयणं।' तओ सा पेसिया तियसेण, तप्पभावेण य निमेसमित्तेण पाडलिपुत्तं पत्ता। उग्घाडिऊण वासभवणं पइट्ठा। तं च केरिसं?

जलंतमणिदीवयं, कणयकंतिसंदीवियं।
सुपक्कफलपूरियं, महमहंतकप्पूरियं ॥ १६ ॥
पफुल्लकुसुमुक्करं, अगरधूवगंधुद्धुरं।
अलंकरणसुंदरं, पणसुगंधियाडंबरं ॥ १७ ॥

[३८] तं पलोइऊण पुव्वाणभूयरयकेलिसुमरणसंजाय-कुसुमसरवियारपसरावि पिययमपासपसुत्तभइणीनिरूवणईसा-वसविवसा सवक्किजणणीकयकूवपक्खेवसंभरणुब्भूयकोवरसा तणयवयणपलोयणसंभवंतप्पमोयरसभरा सा खणं ठाऊण धाइ-सयमज्झसुत्तपुत्तसगासं गया, तं कमलकोमलकरेहिं गहिऊण खणं रमावेऊण चउद्दिसंपि नियारामफुल्लफलपगरं खिवेऊण पत्ता नियवासकूवं आरामसोहा।

[३९] तओ पभायसमए धाईहिं विन्नतो राया—'सामि! अज्ज कुमारो पुप्फफलेहिं केणावि पूइओ दीसइ।' तं सुच्चा रायावि आगओ तस्सगासं। तं च तहा दट्ठूण पुच्छिया सा कूडआरामसोहा। सावि भणइ—'मया नियारामाओ समरिऊण समाणीयं पुप्फफलाइयं एयं।' तओ रण्णा वुत्तं—'संपयं किं न आणेसि?' तीए वुत्तं—'न वासरे आणेउं सक्किज्जइ।' तओ विलक्खवयणं तं पिक्खिउण रण्णा चिंतियं—'अवस्समेस कोवि पवंचो।' एवं तिन्नि दिणा जाया। तओ सा रण्णा वुत्ता—'अज्जवस्सं आराममाणेह।' तओ सा अच्चंतं विलक्खवयणा हुत्था, दंभो कइदिणे छज्जइ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

[४०] चउत्थजामिणीए आरामसोहा पुव्वंव सव्वं काऊण जाव नियत्ता, ताव भूवइणा करयलेण साहिय साहिया—'हा पाणपिए ! पियं जणं पणयपरं किमेवं विप्पयारेसि ?' तीए वुत्तं—'पाणेसर ! न विप्पयारेमि, परमत्थि किंपि कारणं।' रण्णा भणियं— वागरेसु, अन्नहा न मिल्हिस्सं।' सावि सप्पणयं विन्नवेइ—'नाह ! मुंचसु मं, कल्ले उण अवस्सं कहिस्सं।' तओ य राया वागरेइ—'मुक्खोवि किं करयलचडियं चिंतारयणं मुंचइ ?' तीए वि भणियं—'एवं कुणमाणस्स तुज्झवि हविस्सइ पच्छातावो', तहवि पुहवीसरो तं न मुंचइ। तओ तीए मूलाओ जणणीए दुव्विलसियं कहंतीए संवुत्तो अरुणुग्गमो।

[४१] तम्मि समए केसकलावं विलुलियं संठवमाणीए पडिओ मओ नागो, तं पलोइय सा बाला विसायपिसायगहिउव्व झत्ति मुच्छानिमीलियच्छी छिन्नसाहव्व महिवीढे पडिया। सीय-लोवयारेहिं पत्तचेयणा सा भणिया राइणा—'पाणेसरि ! केण हेउणा अप्पाणयं विसायसायरे पक्खिवसि ?' तओ सा भणइ—'सामिय ! ताउव्व हियकारी एस नागकुमारसुरो, जो मज्झ संनिज्झं सया कुणमाणो आसि, तेण य मे पुरओ भणियं हुत्था—'जइ मज्झाएसं विणारुणोदयं जाव अन्नत्थ चिट्ठिहिसि, तओ परं मज्झ ते दंसणं न भविस्सइ, केसपासाओ य मयभुयंगो पडिस्सइ, तओ नाह ! तुम्हं अविसज्जियाए महंवि संपयं तं वुत्तं।' तओ परं सावि तत्थेव ठिया।

[४२] तब्भइणिं गोसे तोसेण रहिओ निविडबंधणेहिं बंधिय जाव राया कसाहिं ताडिउं पउत्तो, ताव विन्नतो चलणेसु निवडिऊण सहावसरलाए आरामसोहाए—

जइ मह उवरि पसायं करेसि ता सामि ! मुंच मे भइणिं।
करिय दयं हियदइयं एवं पुव्वं व पिक्खेसु ॥ १८ ॥
रायावि भणइ जइविहु एयाए देवि ! दुट्ठचित्ताए।
ठावणयंपि न जुत्तं वयणं तुह तहवि दुल्लंघं ॥ १९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मोयाविया य तीए नियपासे ठाविया य भईणि त्ति ।
पच्चक्खं सज्जणदुज्जणाण परिपिच्छह विसेसं ॥२०॥

[४३] तओ पलयानलं व पज्जलंतेण राइणा नियपुरिसा हक्कारिऊण समाइट्ठा—'रे रे दुवालस वि गामे हरिऊण अग्गिसम्मं माहणं तस्स माहणिं च कण्णनासऊडे छिदिऊण मज्झ देसाओ निव्वासेह, एयं रायवयणं वज्जग्गिफुल्लिंगउग्गं सोऊण आरामसोहा भत्तुणो चलणेसु निवडिऊण विन्नवेइ—

जइ कहवि डसइ भसणो पुणो वि किं कोवि खाइ तं सुयणो ।
इय मुणिय नाह ! मुंचसु मह जणए करिय मइ पणयं ॥२१॥

[४४] एवं देवीए भणिओ रायावि तच्चित्तखेयपणोयणत्थं तेसिं पुव्वं व गामे देइ, तओ तेसिं विसयसुहमणुहवंताणं सुहंसुहेण वच्चइ कालो ।

[४५] एगया परुप्परं धम्मवियारं कुणंताणं एरिसो संलावो संवुत्तो आरामसोहाए—'पिययम ! पुव्विमहं दुक्खिया होऊण पच्छा सुहभायणं जाया, ता मन्ने कस्सवि कम्मस्स एस परिणामो । एयमत्थं च पुच्छामि जइ कोवि नाणी एइ ।'

[४६] एवं संलवंतीए तीए उज्जाणपालओ आगंतूण पणामपुव्वं नरवरं विन्नवेइ—'देव ! नंदणुज्जाणे करकलियमुत्ताहलमिव सयलभावे वियाणमाणो पंचसयसाहुपरियरिओ सिरिवीरचंदसूरी समोसरिओ ।' तं सुणिय हरिसभरुब्भिन्नरोमंचो राया तस्स पीइदाणं दाऊण विसज्जेइ । तओ रण्णा भणियं—'पिए ! उट्ठेसु, संपुण्णो ते मणोरहो, जं अज्जेवागओ महप्पा ।' तओ राया आरामसोहासहिओ सयललोयपरियरिओ य उज्जाणे गंतूण तिपयाहिणापुव्वं मुणिंदं पणमिय जहोच्चियट्ठाणे उवविट्ठो । भगवयावि पारद्धा देसणा—

अणोरपारे संसारे भमंतो वि जणो सया ।
पावाओ दुक्खरिंछोलिं लहंते धम्मओ सुहं ॥२२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

[४७] इच्चाइधम्मदेसणावसाणे जोडियकरसंपुडा आराम-सोहा गुरुं विन्नवेइ —'भयवं ! जं जहा तुम्हेहिं आइट्ठं तं तहेव, परं मए पुव्वभवे किं कयं ? तं संपयं पसीय आइसइ ।' तओ सूरीवि सजलजलहरगंभीरसरेण वागरिउमाढत्तो—

[४८] 'इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे चंपाए नयरीए सयललोयप्पसिद्धो धणउव्व समिद्धो कुलंधरो नामा सिट्ठी हुत्था । तस्स कुलाणंदा नाम भारिया । तीए समं विसयसुहमणुहवमाणस्स कमेण रूवलडहलायण्णपुण्णाओ सत्त धूयाओ जायाओ । तासिं कमेण नामाणि—कमलसिरी, कमलवई, कमला, लच्छी, सिरि, जसएवी, पियकारिणी य । ताओ धणवंत-कुलेसु परिणीयाओ भोगे भुंजमाणीओ सुहं सुहेण विहरंति । अह दिव्ववसा अट्ठमिया वि कन्नया जाया ।

[४९] तम्मि समए मायापियरो अईव दुक्खिया, तीसे नामंपि न कुणंति । सावि अणायरेण वड्ढंती जुव्वणमणुपत्ता, निब्भग्गत्ति लोए तीए नामं पयडं जायं, तं पिक्खंताणं अम्मा-पिऊणं अईव उव्वेओ होइ । अन्नदिणे परियणेण सिट्ठी भणिओ —तुममेयं (वुड्ढ) कुमारिसपरिणाविंतो लोए गरुयमववायं पामिहिसि, एवं भणिओ वि मणे खेयमुव्वहंतो दुहेण सिट्ठी चिट्ठइ ।

[५०] एगया सचिंतस्स सिट्ठिणो हट्टंमि उवविट्ठस्स मलमइलगत्तो दीहमग्गुल्लंघणपरिस्संतो एगो पहिओ दिट्ठी-गोयरं गओ, तओ सिट्ठिणा पुट्ठो—'कओ तं समागओ ? कोसि तुमं ? का य ते जाई ? किं नामासि ? किमत्थमत्थाग-ओसि ?' तओ तेण संलत्तं—'अहं सागरतीरमंडणाओ चउड-देसाओ समागओ । परं कोसलदेसमंडणाए कोसलाए निवासिणो नंदसिट्ठिणो सोमाए भारियाए कुच्छिसमुब्भूओ नंदणाभिहाणो तणओ । कमेण खीणविहवो अत्थोवज्जणत्थं चोडदेसं गओ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तत्थवि अणुवज्जियदविणो दालिद्दोवद्दुओ अभिमाणनडिओ न गओ सदेसं। तत्थेव परघरेसु कज्जाइं कुणंतो उअरभरणं करेमि। इओ य एयाओ पुराओ गएण वसंतदेवेण केणावि कज्जेण लेहं दाऊण सभवणे अहं पेसिओ। दंसेहि, पसीय तस्स गिहं, जहा लेहं देमि तप्पिउणो सिरिदत्तसिट्ठिणो।

[५१] तओ कुलंधरोवि चिंतेइ—'महदुहियाए एस वरो जुग्गो निब्भग्गाए निब्भग्गसेहरो परदेसिओ कोवि, एयं च परिणिऊण पुणोवि न इत्थ एस एही, जं अहंकारनडिउव्व पलोइज्जइ, न कइयावि ससुरघरसमीवे एरिसो चिट्ठइ।' तओ तं भणइ—'वच्छ! मह घरमागच्छ, जेण ते जणओ मज्झ परमो मित्तो आसि।' तेणावि वुत्तं—'ताय! जेण कज्जेणाहमागओ तं पढमं काऊण पंच्छा तुम्ह घरे आगमिस्सं।' तओ सिट्ठी नियपुरिसं सिक्खविय तेण समं पेसेइ—'भद्द! जया एस देइ लेहं, तओ परं मम समीवे आणेयव्वो।'

[५२] तओ तेण सह गओ सो सिरिदत्तगेहं, तं पणमिऊण सव्वसंदेसपुव्वं समप्पिओ लेहो, तेणावि वाइओ। तओ नंदणेण भणिओ सिरिदत्तो, जहा—'मह जणयमित्तो कुलंधरसिट्ठी इत्थ परिवसइ, तेणेस पुरिसो मह आह्वणत्थं सह पेसिओ, ता तस्स मिलिऊण पुणोवि आगमिस्सं तुम्ह पासं।'

[५३] तओ पुरिसेण समं गओ सिट्ठिघरं, तओ पच्छा ण्हाविय अहिणववत्थाणि नियंसाविय विसिट्ठभोयणं भुंजाविय तंबोलं च दाविय सो सिट्ठिणा भणिओ—'वच्छ! मह धूयं परिणेसु।' सो भणइ—'चउडदेसे अज्जवि मए गंतव्वं।' कुलंधरेण भणियं—'एयं धूयं परिणाविय नीविं दाऊण तुज्झेव समं पेसिस्सं, तओ पडिवन्नतव्वयणो नंदणो निब्भग्गनामियं धूयं परिणाविओ।'

[५४] अह सिरिदत्तेण सो भणिओ—'जइ तुहं इत्थ चिट्ठसि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ता अवरं जणं लेहं दाऊण तत्थ पट्ठविस्सं गरुयं कज्जमत्थि अम्हाणं।' नंदणोवि भणइ—'ससुरमापुच्छिय तत्थेव गमिस्सं। तओ गंतूण ससुरयं पुच्छइ—'ताय ! महंतं कज्जं मह अत्थि, तेण हेउणा चउडविसयं पइ मं पेसेइ।' सिट्ठीवि चिंतेइ—'मम मणोरहोच्चियं चेव भणियमणेण।' तओ सिट्ठिणा भणियं—'वच्छ ! वच्चेसु नियभारियासहिओ, तुह जुग्गयं भंडयं तत्थेव ठियस्स पट्ठविस्सं।

[५५] तओ तेण सिरिदत्तस्स कहिओ वुत्तंतो—'मह अग्गे कहह कहणिज्जं।' तेणावि तस्स समप्पिओ लेहो, निवेइया य संदेसया। तओ सो घित्तूण दइयं संबलमित्तसहाओ इक्कल्लओ चलिओ। कमेण पत्तो उज्जेणिं। तओ चिंतइ—'लहुपयाणएहिं बहुभक्खियं संबलं, इत्थी सह गमणेण न लब्भइ मग्गपारो।' ता एयं सुत्तं मुत्तूण वच्चामि सिग्घं वंछियदेसं।

[५६] तओ सा वुत्ता—'पिए ! पक्खीणं संबलं तो किं कज्जइ ? जइ परं भिक्खाभमणेण पूरिज्जइ उयरं ता तुमं मए समं भिक्खं भमिहिसि नवत्ति ?' एवं वुत्ता, तओ तीए संलत्तं—'तुह पिट्ठिलग्गाए भिक्खावि मे महूसवसारिसी।' एवं परुप्परं मंतयंता नयरीए बाहिरियाए अणाहपहियसालाए दोवि सुत्ता। अह सो भिक्खाए लज्जंतो तं भारियं तत्थेव सुत्तं मुत्तूण संबल-पुट्टलयं च गहिय सणियं सणियं उट्ठिय अवरमग्गेग पलाणो।

[५७] अह संजाए पभायसमए सा पियमपिक्खंती इओ तओ तरलतरले विलोयणे खिवंती संबलपुट्टलमपिच्छंती य चिंतेइ—नूणं मं मुत्तूण गओ दइओ, तओ सा हाहारवमुहरमुही अंसुपवाहण्हवियथणकलसजुयला उत्तट्ठहरिणिव्व दीणवयणा पलविउं लग्गा—

एगागिणिं अणाहं मं अबलं चइय दइय ! कत्थ तुमं ?
लंघेऊणं नियकुलमज्जायं संपइ गओसि ॥२३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हाहा !! निल्लज्जसेहर !! तरुणि निक्करुण ! लहडलायण्णं।
निब्भरपिम्मं दइयं चइत्तु दंसेसि कस्स मुहं ? ॥२४॥

नवजुव्वणललियंगि कहंपि जइ कोवि मं बलेणावि।
छिवइ तओ किं न हवइ वयणिज्जमणज्ज!!तुज्झ कुले? ॥२५॥

[५८] अहवा किमेएण परिदेविएण ? न छुट्टिज्जए पुव्व-कयकम्मुणो। तहावि करेमि किंपि उवायं, जहा जीवियाओवि अब्भहियं सीलं सुदिढहियया होऊण रक्खेमि दुस्सीलेहिंतो। ता वच्चामि पिउहरं, अहवा तत्थ गयाए न मज्झ गउरवं, तो इत्थेव धणिय धम्मधणियं कमवि वणियं जणयं काऊण तस्स घरे निरवज्जाणि कज्जाणि कुणमाणी अत्तणो निव्वाहं करेमि त्ति धीरत्तमवलंबिय बाला उज्जेणीए पुरीए पविसिय समंतओ दिसाओ पिक्खंती एगं महापुरिसं वणियं पलोएइ। तच्चलणेसु निवडिऊण सकरुणसरं वज्जरइ—'ताय ! मज्झ अणाहाए तुज्झ चेव चरणा सरणं, सच्छंदा हि इत्थी खलेहिं खिसिज्जइ, जओ—

बालत्तणंमि जणओ, जुव्वणपत्ताइ होइ भत्तारो।
वुड्ढत्तणेण पुत्तो, सच्छंदत्तं न नारीणं ॥२६॥

[५९] तओ तेण मणिभद्दसिट्ठिणा सा पुट्ठा 'वच्छे ! कासि तुमं ?' सावि साहइ—'ताय ! चंपाए नयरीए कुलंधरववहारिणो धूया ! वल्लहेण सह चउडदेसं पइ पत्थिया सत्थाओ भट्ठा इत्थमागया। अओ वरं तुम्हे चेव मे जणया।' तओ सिट्ठी तव्वयणामयसित्तुव्व आणंदिणो भणइ—'वच्छे ! आगच्छह मज्झ घरे पुत्ति व्व चिट्ठसु सत्थाइगवेसणं निव्वाहं च तुह सव्वं करिस्सं ति, तेण नियपुरिसा सव्वत्थ पेसिया, न पत्ता वत्ता वि सत्थस्स। तओ तस्स मणे संसओ जाओ, एयाए वयणमवितहं वितहं वा ? इय जाणणकए चंपाए कुलंधरसिट्ठिपासे किमवि सिक्खविय पुरिसो पेसिओ, तेणावि तत्थ गंतूण भणिओ सिट्ठी—

[६०] 'अहं माणिभद्दसिट्ठिणा तुम्ह पासं पेसिओ, कावि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तुम्ह धूया अत्थि त्ति संबंधं काउं।' तओ कुलंधरो साहइ—'मह सत्त धूयाओ इत्थेव नयरे परिणीयाओ नियनियभत्तुणो गेहेसु विलसंतीओ चिट्ठंति। अट्ठमिया पुण संपयं परिणीया पइणा समं चउडदेसे संपत्थिया। अन्ना य कन्ना नत्थि जेण तुम्हेहिं सह संबंधो कीरइ।'

[६१] तओ सो पुरिसो नियनगरमागंतूण सव्वं सरूवं कहेइ माणिभद्दस्स। सोवि हु विन्नायवुत्तंतो तीए विसेसेण गउरवं करेइ, सावि पइदिणं विणयाइणा गुणेण सपरियणं तमणुरंजइ। जओ—

गौरवाय गुणा एव, न तु ज्ञातेयडम्बरः।
वानेयं गृह्यते पुष्पमङ्गजस्त्यज्यते मलः॥ २७॥

[६२] अह माणिभद्देण जिणमयभावियमाणसेण उत्तुंगचंगं काराविय जिणभवणं। तत्थ सा परमगुरुचलणसुस्सूसणपउणी चेइए लिंपणमंडणसंमज्जणाइ सया करेइ। जं जं च दविणजायं भत्तुल्लयाइकए सिट्ठिणा पावेइ तेण तेण सा जिनभवणे रत्थाइयं कारेइ। तओ विसेसेण तुट्ठो सिट्ठी बहुन्नहुयरं दविणं वियरेइ। तेण तीए देवस्स छत्तत्तयं कारियं। तं च केरिसं?—

माणिक्कचक्कजडिउज्जलहेमदंडं,
मुत्ताहलावलिपहाणकयावचूलं।
चीणंसुएण पडिछन्नुवरिल्लदेसं,
चंचंतकंतमणिकंतिविभासियासं॥ २८॥

[६३] तं च जिणोवरि ठावियं, अन्नं च चामरभिंगारालंकाराइ देवस्स देइ, एवं तिहुयणगुरुणो वेयावच्चं कुणमाणी चिट्ठइ, अन्नं च चउव्विहाहारवसणसयणासणाइणा पराए भत्तीए गुरुजणमाराहेइ, साहम्मियवच्छल्लं च करेइ, एवं जिणाणं सुगुरूणं च सुस्सूसणं कुणमाणी सम्पत्तसम्मत्ता सुहंसुहेण कालमइक्कमइ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

[६४] अन्नया माणिभद्दं सखेयं पिच्छिय भणइ—'ताय ! किं निमित्तं चित्ते विसायमुव्वहह ?' सो भणइ—'पुत्ति ! केणावि कारणेण देवारामो फलफुल्लपत्तरमाउलोवि पुव्वंव संपयं सिंचंतोवि अहिययरं सुक्कइ, न सस्सिरीओ होइ, अओ मे मणे महई चिन्ता।' सा भणइ—'ताय ! एयंमि अत्थे मा विसायमुव्वहसु, अहं नियसीलमाहप्पेण जाव एयमारामं पुव्वंव फलफुल्लपल्लवसहियं न करेमि ताव चउव्विहाहारमवि न भुंजामि एस मे निच्छओ।' तओ सिट्ठिणा वारिज्जंतीवि सासणदेविं मणे धरेऊण जिणवेइयदुवारे उवविट्ठा।

[६५] तओ तइयरयणीए सासणदेवीए पच्चक्खीहोऊण सा भणिया—'वच्छे ! मा कुणसु विसायं, अज्जेव पभायसमए पुण नवो होही आरामो तुह सीलपभावनासियपच्चणीयवंतरोवद्दवत्तणेण त्ति' कहिऊण जाव सासणदेवया गया सट्ठाणं, ताव विभाया विभावरी, तीएवि एस वुत्तंतो सिट्ठिपुरओ निवेइओ। तओ सोवि हरिसुप्फुल्ललोयणो तीइ समं संपत्तो चेइयारामं। सो य केरिसो ?—

अउव्वउव्विल्लिरपल्लवाउलो,
पप्फुल्लफुल्लुक्करसोरभुज्जलो।
फलेहि पक्केहि सया मणोहरो,
हवेइ नो कस्स जए मणोहरो ? ॥ २९ ॥

[६६] तं च दट्ठूण सिट्ठिणा भणियं—'फलिया मे मणोरहा।' तं च पंचसद्दनायपुव्वयं समणसंघपरियरिओ सो नेइ नियं भवणं। लोओवि तीए सीलमाहप्पचमक्किओ उववूहइ—'पिच्छह सुक्कोवि आरामो कहं पुणो सच्छाओ जाओ ? ता जयइ जयइ जिणसासणं जत्थ एरिसनरनारिरयणाणि उप्पज्जंति।' तओ सा संघं पडिलाभिय पारणं करेइ।

[६७] अह अन्नया पच्छिमजामिणीए सुत्तविउद्धा निय-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुव्ववुत्तंतं सरिऊण चिंतिउं लग्गा—'ते धन्ना, जे परिणामविरसं आवायमहुरं किंपागफलं व विसयसुहं चइय अणोरपारसंसार-सागरतरिं पव्वज्जं पवन्ना। अहं पुण अउन्ना विसयामिसलुद्धा पत्थमाणावि अलद्धभोगा परं लद्धजिणमयरहस्सावि सामण्णं काउमसमत्था गिहिधम्मं पालयंती विसिट्ठतवोविहाणेसु उज्ज-मिस्सं। तओ तीए बहुविहेहिं सामिग्गहेहिं तवोकम्मेहिं धम्म-सरीरं पोसंतीए वि सरीरमईव सोसियं।

[६८] तओ अपच्छिममारणंतियसंलेहणं काऊणाणसणं पडिवज्जिय कयपंचपरमिट्ठिसंभरणा सा मरिऊण सोहम्मे कप्पे पत्ता देवत्तणं। तत्थ दिव्वाइं भोगसुहाइं भुंजिय तओ चइऊण अग्गिसम्ममाहणस्स गिहे दुहिया विज्जुपहनामिया तुमं समु-प्पन्ना।

[६९] बालत्तणे किंचि दुक्खिया जाया, माणिभद्दसिट्ठीवि देवत्तणमणुहविय मणुजम्मं पाविय तओ नागकुमारेसु सुरो जाओ। जं च तए मिच्छत्तिणो तिउणो गिहे ठियाए कुदंसण-मोहियाए किंचि पावमणुट्ठियं तेण पढमं दुक्खिया जाया। पच्छा माणिभद्दगिहट्ठियाए जं देवगुरुवेयावच्चं कयं, तस्स पुण्णस्साणु-भावेण अणन्नसामन्नं सुहमणुपत्तं।

[७०] जं च तए तया जिणमंदिरारामो सच्छाओ कओ, तेण तुह सह आरामो वच्चइ। जं च छत्तत्तयमउडाइआभरणाइं दिन्नाइं सव्वन्नुणो, तेण सव्वंगभूसिया सियायवत्तच्छायाए हिंडसि। जं च जिणहरे रत्थाइं दिन्नाइं, तेण तुज्झ बहूणि भोगंगाणि जायाणि, किंच—एयस्स जिणगुरुवेयावच्चकरणो-वज्जियसुकयरुक्खस्स फलेण तुमं देवसुहाणि अणुहविऊण माणुस्सए भवे रज्जसिरिं भुंजिऊण कमेण सिवसंपयं पाविहिसि।

[७१] एवं नाणिवयणमायन्निऊणारामसोहा मुच्छानिमी-लियच्छी पवणाइणा परियणेण समुप्पाइयचेयणा उट्ठिऊण गुरुं पणमिय विन्नवेइ—'जं भयवंतेहिं आइट्ठं तं सव्वं जाइस्सरणेण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मह पच्चक्खं जायं। अओ मज्झं संसारवासाओ उव्विग्गं चित्तं संपयं पियमापुच्छिऊण तुम्ह पयमूले पवज्जं पडिवज्जिस्सं।'

[७२] इय आरामसोहाए वयणं सुणिय राया भणइ— 'पिए! मा उस्सुक्का, अहमवि अच्चंतभवुव्विग्गमणो मल्लसुंदर-कुमारं रज्जे ठविय तए सह पवज्जं गहिस्सामि। तओ गुरुं नमिऊण राया देवीसहिओ गिहमागंतूण तणयं रज्जे अहिंसिचिऊणं कयजिणसासणप्पभावणो देवीए सद्धि महाविभूइए गुरुपायमूले पवज्जं पडिवज्जिय गहियदुविहसिक्खो कमेण कयत्थो हुत्था।

[७३] तओ सूरीहिं सो रायरिसी गणहरपए आरामसोहा य पवत्तिणिपए संठावियाइ। तओ दोवि बहूणि दिणाणि भव्वजणे पडिबोहिऊण पज्जंते कयाणसणा गया सग्ग। तओ चविउं माणुसे भवे सव्वविरइं लहिऊण कयसयलकम्मक्खया सिवं पयं पाविस्संति—

आरामसोहाइ चरित्तमेयं निसामिऊणं सवणमियाभं।
कुणेह देवाण गुरूण वेयावच्चं सया जेण लहेह सुक्खं ॥३०॥

॥ इअ आरामसोहाकहा समत्ता ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आरामशोभा-कथा

मूलानुगामी शब्दार्थ और हिन्दी अनुवाद

[१] इहेव=इसी। जंबूरुक्खा=जम्बू नामक वृक्ष। लंकिय=अलंकृत। दीव=द्वीप। मज्झट्ठिए=मध्य में स्थित। अक्खंड=अखण्ड। छक्खंड=छह खण्डों से। मंडिए=सुशोभित। बहुविहसुहनिवह=विविध प्रकार के सुख-समूह। निवासे=निवास-स्थान। भारहवासे=भारतवर्ष में। असेसलच्छि=समस्त प्रकार की लक्ष्मियों का। संनिवेसो=निवास-स्थान। अत्थि=था। कुसट्टदेसो=कुशार्त्त नाम का देश। तत्थ=वहाँ। पमुइय=प्रमुदित। कीलियलोयमणोहरो=क्रीडाओं से युक्त लोगों से मनोहर। उग्गविग्गहुव्व=तेजस्वी क्षत्रिय-जाति में उत्पन्न के समान। गोरिसुंदरो=शुभ्र एवं सुन्दर। सयलधन्न-जाइअभिरामो=समस्त धान्यों की उत्पत्ति से सुन्दर। बलासओ=बलाशक। नाम=नाम का। गामो=ग्राम। जत्थ=जहाँ। चाउद्दिसि=चारों दिशाओ में। जोयणपमाणे=योजन-प्रमाण। भूमिभागे=भूमिभाग में। कयावि=कोई भी। रुक्खाइ=वृक्षादि। उग्गइ=उगता था।

यहीं पर जम्बू नामक वृक्ष से अलंकृत द्वीप (जम्बूद्वीप) के मध्य में स्थित, अखण्ड छह खण्डों से सुशोभित, विभिन्न प्रकार के सुख-समूहों के निवास-स्थान भारतवर्ष में, सभी प्रकार की लक्ष्मियों से समृद्ध कुशार्त्त नाम का एक देश था। वहाँ प्रमुदित, क्रीड़ाओं से युक्त लोगों से मनोहर, तेजस्वी क्षत्रिय-जाति में उत्पन्न के समान, शुभ्र एवं सुन्दर एवं समस्त धान्यों की उत्पत्ति से अभिराम बलासक नामक ग्राम था। जहाँ चारों दिशाओं में एक योजन प्रमाण भूमि-भाग में कहीं भी किसी भी प्रकार के वृक्ष आदि नहीं उगते थे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

[२] तत्थ=उस (ग्राम) में। चउव्वेयपारगो=चारों वेदों में पारंगत। छक्कम्मसाहगो=छह कर्मों का साधक। अग्गिसम्मो=अग्निशर्मा। माहणो=ब्राह्मण। परिवसइ=निवास करता था। तस्स=उसकी। सीलाइगुणपत्तरेहा=शीलादिगुणों से अलंकृत। अग्गिसिहा=अग्निशिखा। भारिया=पत्नी। ताणं=उनके। परमसुहेण=परम सौभाग्य से। भोगे भुंजताणं=सुख भोगने के बाद। कमेण=समयानुसार। जाया=उत्पन्न। एगा=एक। दारिया=पुत्री। तीसे=उसका। विज्जुप्पह=विद्युत्प्रभा। कयं=किया। अम्मापियरेहिं=माता-पिता ने।

जीसे=जिसके। लोलविलोयणाण=चंचल एवं सुन्दर नेत्र। पुरओ=सम्मुख। नीलुप्पलो=नीलकमल। किंकरो=किंकर। पुण्णो=पूर्णिमा। रत्तिवइ=रात्रिपति (चन्द्रमा)। मुहस्स=मुख की। वहई=धारण करना। निम्मललील=निर्मल लीला। सया=सदा। नासावंसपुरो=नासिका-भाग के सम्मुख। सुअस्स=शुक की। अपडू=अकुशल। चंचूपुडो=चंचुपुट। निज्जरा=शोभाहीन। रूवं=रूप को। पिक्खिय=देखकर। अच्छरासुवि=अप्सराएँ भी। धुवं=निश्चय ही। जायंति=हो जाती हैं। ढिल्लायरा=शिथिलादर, म्लानमुख।

उस बलासक ग्राम में चारों वेदों में पारंगत तथा छह कर्मों का साधक अग्निशर्मा नामक एक ब्राह्मण निवास करता था। शीलादि गुणों से अलंकृत अग्निशिखा नाम की उसकी पत्नी थी। उनके परम सौभाग्य से, सुखभोगों के बाद समयानुसार एक पुत्री का जन्म हुआ। माता-पिता ने उसका नाम विद्युत्प्रभा रखा।

"जिसके सुन्दर चंचल नेत्रों के सम्मुख नीलकमल भी किंकर के समान तथा पूर्णमासी का चन्द्रमा, जिसके मुख की निर्मल लीला को निरन्तर धारण करता था, जिसके नासाभाग के सम्मुख शुकपक्षी की चोंच भी अकुशल (अपडू) एवं शोभाहीन प्रतीत होती थी तथा जिसके सौन्दर्य को देखकर अप्सराएँ भी निश्चय ही म्लानमुख हो जाती थीं ॥१॥"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

[३] कमेण=क्रम से। तीसे=उस (पुत्री के)। अट्ठवरिस-देसियाए=आठ वर्ष के होने पर। दिव्ववसा=दैव के वश से। रोगायंकाभिभूया=रोगादि से ग्रस्त होने के कारण। माया=माता। कालधम्ममुवगया=कालधर्म को प्राप्त हो गई, स्वर्गवास हो गया। तत्तो=उसी समय से। सा=उस। सयलं=सभी। घरवावारं=घर का कार्यभार। करेइ=करने लगी। गोचार-णत्थं=गायों को चराने के लिए। बाहिं=बाहर। गंतूण=जाकर। मज्झण्हे=मध्याह्न में। उण=पुनः। गोदोहाइ=गो दोहन आदि। निम्मिय=निर्मित। जणयस्स=पिता के लिए। देवपूयाभोयणाइं=देव-पूजा एवं भोजन। संपाडिऊण=सम्पन्न करके। सयं=स्वयं। भुत्तूण=भोजन कर। पुणरवि=पुनः। गोणीओ=गायों को। चारिऊण=चराकर। संझाए=सन्ध्या काल में। घरमागंतूण=घर लौटकर। कयपाओसियकिच्चा=प्रादोषिक (रात्रिकालीन) कृत्यों को करके। खणमित्तं=क्षण मात्र। निद्दासुहं=निद्रासुख। अणुहवइ=अनुभव करती। पइदिणं=प्रतिदिन। कुणमाणी=करती हुई। घरकम्मेहिं=घर के कार्यों को। कयत्थिया=थककर, ऊबकर। जणय-मन्नया=अपने पिता से। भणइ=कहा। ताय=पिता। अहं=मैं। घरकम्मुणा=घर के कार्यों से। अच्चंत=अत्यधिक। दूमिया=ऊब जाना। पसिय=कृपा कर। घरणिसंगहं=गृहिणी का संग्रह (विवाह)। कुणह=करो।

तदनन्तर क्रमशः विद्युत्प्रभा के आठ वर्ष के होने पर दैव के वश से रोग आदि से ग्रस्त होने के कारण उसकी माता अग्निशिखा का स्वर्ग-वास हो गया। इस कारण उसके घर का समस्त कार्यभार उसी पर आ पड़ा। प्रातः काल उठकर वह गोदोहन से निपटकर घर की सफाई करती, (और) गायों को चराने के निमित्त चली जाती थी। मध्याह्न में पुनः गोदोहन कर पिता के लिए देवपूजा एवं भोजनादि कराकर (बाद में) स्वयं भोजन करती और पुनः गायों को चराकर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सन्ध्याकाल घर लौटती, तब प्रादोषिक कृत्यों को करके कुछेक क्षणों के लिए ही सोती थी। इसी प्रकार प्रतिदिन गृहकार्यों को करती हुई तथा उनसे थककर उसने अवसर पाकर अपने पिता से कहा—"हे पिता, गृहकार्यों से मैं बहुत ऊब गई हूँ। अत: कृपाकर आप अपना दूसरा विवाह कर लीजिये।"

[४] इय=इस प्रकार। तीइ=पुत्री के। वयणं=वचन। सोहणं=सुनकर। मन्नमाणेण=प्रसन्नचित्त होकर। माहणी=ब्राह्मणी। विसद्दुमसारणी=विषवृक्षलता के समान। कया=करना। सावि=वह भी। सायसीला=खाने-पीने की लालची। आलसुया=आलसी। कुडिला=कुटिला। तहेव=उसी प्रकार। घरवावारं=घर के कार्यों को। तीए=पुत्री। निवेसिय=थोप दिए। सयं=स्वयं। ण्हाण=स्नान। विलेवण=विलेपन। भूसणभोयणाइभोएसु=आभूषण, भोजन एवं भोगादि में। वावडा=व्यस्त। तणमवि मोडिऊण न दुहा करेइ=अपने शरीर को मोड़ना भी नहीं चाहती। विज्जुप्पहा=विद्युत्प्रभा। विज्जुव्व=बिजली के समान। पज्जलंती=प्रज्वलित होती हुई। चिंतेइ=विचार करती। अहो=अरे। मए=मेरे। सुहणिमितं=सुख के निमित्त। जणयाओ=पिता ने। कारियं=किया है। निरउव्व=नरक के समान। दुहहेउयं=दु:खों का कारण। जायं=उत्पन्न हो गया है। छुट्टिज्जइ=छुटकारा मिलेगा। दुट्ठ-कम्मणो=दुष्ट कर्मों से। णिमित्तमित्तेव=निमित्त मात्र ही। जओ=क्योंकि।

पुव्वकय=पूर्वकृत्। विवागं=विपाक, कर्म-फल। अवराहेसु=अपराधों में। परो=दूसरे॥ २॥

यस्माच्च=जिससे। येन=जिसके द्वारा। यथा=जिसप्रकार। यच्च=जो। यत्र=जहाँ। तस्माच्च=उससे। तेन=उसके द्वारा। तथा=उस। तदा=उस समय। तच्च=उसे। तावच्च=तब

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तक। तत्र=वहाँ। कृतान्तवसात् उपैति=बलात् यमराज को प्राप्त हो जाता है।। ३ ।।

अपनी पुत्री विद्युत्प्रभा के सुखद वचन सुनकर उसने प्रसन्नचित्त होकर विषवृक्ष लता के समान एक ब्राह्मणी के साथ विवाह कर लिया। किन्तु वह स्वभावतया विलासिनी, खाने-पीने की लालची, आलसी एवं कुटिल थी। अतः उसने घर के सभी काम-काज विद्युत्प्रभा पर ही थोप दिये एवं स्वयं वह स्नान, विलेपन, भूषण भोजनादि भोगों में व्यस्त रहने लगी। वह सौतेली माता अन्य कार्यों में अपने शरीर को मोड़ना भी न चाहती थी।

यह सब देख विद्युत्प्रभा बिजली की तरह प्रज्वलित होती हुई विचार करने लगी—"अरे, मेरे सुखों के निमित्त पिता ने जो कुछ किया है, वह तो नरक के समान दुखों का कारण बन गया। अब अदृश्य इन दुष्ट कर्मों से छुटकारा न मिलेगा, दूसरे तो फिर निमित्त मात्र ही होते हैं। क्योंकि—

"सभी को पूर्वकृत कर्मों का फल भोगना ही पड़ता है। अपराधों अथवा गुणों में दूसरे लोग तो निमित्त मात्र ही होते हैं।" ।।२।।

"जिससे, जिसके द्वारा, जिस प्रकार, जब और जो, जब तक, जहाँ शुभ एवं अशुभ आत्मा के कर्मों का बन्ध होता है, उससे, उसके द्वारा, उस प्रकार, उस समय, उसे, अपने वहाँ यमराज के वशीभूत हो जाना पड़ता है।" ।।३।।

[५] अमणदुम्मणा=अन्यमनस्क (व्याकुल चित्त)। गोसे=प्रातःकाल। अरसविरसं=रसविहीन (चलित रस)। लुक्खं=रूखा-सूखा। मक्खिया=मक्खियों से। संकुलं=व्याप्त। भुत्तुद्धरियं=खाने के लिए रखे गए। भुंजइ=खाना। दुक्खमणुहवंतीए=दुख का अनुभव करते हुए। बारसवरिसा=बारह वर्ष। वइक्कंता=व्यतीत हो गए।

इस प्रकार वह अन्यमनस्क (व्याकुल चित्त) हो प्रातःकाल ही गायों

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

को चराकर, मध्याह्न में रसविहीन, (चलित रस) ठण्डा, रूखा-सूखा, सैंकड़ों मक्खियों से व्याप्त, खाने के लिए रखा गया भोजन करती एवं इसी प्रकार दुख का अनुभव करते हुए उसके बारह वर्ष व्यतीत हो गये।

[६] अन्नंमि=अन्य किसी। सुरहीसु=सुगन्धि युक्त। चरंतीसु=चरते-चरते। गिम्हे=ग्रीष्मकालीन। उण्हकरतावियाए=प्रखर सूर्य किरणों के संताप से। रुक्खाभावाओ=वृक्षों के अभाव में। पाओच्छायावज्जिए=छाया न मिलने के कारण। सतिणप्पएसे=घासवाले प्रदेश में। सुवंतीए=सो रही थी। भुयंगो=सर्प। आगओ=आया।

अइरत्तच्छो=रक्तवर्ण के। संचालिय=संचालित। जीहजामलो=दोनों जीभें। उक्कड=उत्कट (प्रचण्ड)। फुंकाराख =फूत्कार का शब्द। सव्वपाणीणं=सभी प्राणियों को ॥४॥

अन्य किसी दिन दोपहर के समय सुगन्धियुक्त घास चरते-चरते ग्रीष्मकालीन प्रखर सूर्य-किरणों के संताप से संतप्त, वृक्षों के अभाव में छाया न मिलने के कारण, घास वाले प्रदेश में जब वह सो रही थी, तभी समीप एक भुजंग आया—

"जिसके नेत्र रक्तवर्ण के थे, जो काला था तथा जिसकी दोनों जीभें चल रही थीं और जो प्रचण्ड फूत्कार के शब्द से सभी प्राणियों को भय से आतंकित कर रहा था।" ॥४॥

[७] नागकुमाराहिट्ठियतणु=सर्प शरीरधारी नागकुमार देव ने। माणुसभासाए=मनुष्य-भाषा में। सुललियपयाए= सुललित पदों से। जग्गवेइ=जगाया। तप्पुरओ=उसके सामने।

भयभीओ=भयभीत। समागओ=आया हूँ। वच्छि= वत्से। मज्झपुट्ठीए=मेरे पीछे। गारुडिया=गारुडिक। लग्गा= लगे हैं। गहिस्संति=पकड़ कर ले जायेंगे ॥५॥

नियए=अपनी। उच्छंगे=गोदी में। सुइरं=शीघ्र ही।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ठाविएवि=रखकर (छिपाकर)। पवरवत्थेणं=उत्तम वस्त्रों से। मह=मेरी। रक्खेसु=रक्षा। इहत्थे=यहाँ पर स्थित। खणमवि=क्षणमात्र भी। विलंब=विलम्ब ॥ ६ ॥

काओ=करना। मंतदेवीणं=दैवी मन्त्र-शक्तियाँ। खमो=सक्षम। आणाभंगं=आज्ञाभंग। काउं=करना ॥ ७ ॥

भयभंति मुत्तूणं=निर्भय होकर। सम्मं=भली प्रकार। कुणेसु=करो। दयालू=दयार्द्र। ठवइ=छिपा लिया ॥ ८ ॥

उस सर्प-शरीरधारी नागकुमार देव ने मनुष्य-भाषा में अत्यन्त सुललित पदों के द्वारा उसे जगाया एवं उससे इस प्रकार बोला—

"हे वत्से, भयभीत होकर मैं तेरे पास आया हूँ। मेरे पीछे जो ये गारुडिक लोग लगे हैं, वे मुझे बाँधकर ले जाएँगे।" ॥५॥

"इसलिए तुम मुझे अपनी गोद में शरण दो और शीघ्र ही अपने वस्त्रों से ढँक दो। मेरी यहाँ सुरक्षा करो, इसमें क्षणमात्र भी विलम्ब मत करो।" ॥६॥

"नागकुमार के शरीरधारी इन गारुडिकों के मन्त्र के प्रभाव से दैवी-शक्तियाँ भी उनकी आज्ञा को भंग करके में समर्थ नहीं। अतः हे पुत्री, तू मेरी रक्षा कर।" ॥७॥

"निर्भय होकर, हे वत्से, मेरे कथनानुसार मेरी रक्षा करो।" विद्युत्प्रभा भी करुणार्द्र हो उठी एवं उसने उस नाग को अपनी गोद में छिपा लिया। ॥८॥

[८] तंमि=उसमें। करठविय=हाथ में स्थित। ओसहिवलया=औषधिवलय (मन्त्र-तन्त्र सम्बन्धी कोई गोलाकार वस्तु)। तप्पिट्ठओ=उसके पीछे। माहणतणया=ब्राह्मण-पुत्री। पुट्ठा=पूछा। एयंमि=इस। पहे=पथ से। गरिट्ठो नागो=महानाग। अहमित्थ=मैं तो यहाँ। वत्थछाइयगत्ता=वस्त्र से ढँककर। अहेसि=थी।

इसके बाद उसी समय हाथ में औषधिवलय (मन्त्र-तन्त्र सम्बन्धी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कोई गोलाकार जड़ीबूटी) धारण किये हुए उस भुजंग के पीछे-पीछे ही शीघ्रतापूर्वक वे गारुडिक लोग आये और उन्होंने उस ब्राह्मण-पुत्री विद्युत्प्रभा से पूछा—"बाले, इस मार्ग से जाते हुए तुमने किसी महानाग को देखा है ?" यह सुनकर उसने उत्तर में कहा—'हे राजन्, मुझसे क्यों पूछते हैं ? क्योंकि मैं तो अपने शरीर को वस्त्र से ढँककर सो रही थी।"

[९] परुप्परं=परस्पर में। संलवंति=विचार-विमर्श। जइ=यदि। बालियाए=बाला ने। तारिसो=वैसा। भयवेविरंगी=भयाक्रान्त। कुरंगीव=कुरंगी (हिरणी) के समान। उत्तट्ठा=त्रस्त होकर भाग जाना। अओ=अतः। तयणु=तदनन्तर। अग्गओ=आगे। पिट्ठओ=पीछे। पलोइय=देखना। कत्थवि=कहीं भी। अलहंता=प्राप्त न करके। हत्थं-मलंता=हाथ मलते हुए। उट्ठसंपुडं=दोनों ओंठ। खंडंता=काटते हुए। विच्छायवयणा=म्लान-मुख। पडिनियत्तिऊण=वापिस हुए।

यह उत्तर सुनकर उन्होंने परस्पर में विचार-विमर्श किया कि यदि इस बाला ने वैसा नाग देखा होता तो भयाक्रान्त कुरंगी के समान यहाँ से संत्रस्त होकर भाग खड़ी होती। अतः नाग यहाँ नहीं आया होगा। तदनन्तर वे आगे-पीछे उसे देखते हुए तथा उसे कहीं भी प्राप्त न कर हाथ से हाथ मलते हुए तथा दाँतों से ओंठ काटते हुए म्लान-मुख होकर वापिस हुए और अपने-अपने घर चले गये।

[१०] नीहरसु=निकलो। इत्ताहे=यहाँ से। वेरिया=वैरी। नीहरिऊण=निकलकर। नागरूवमुज्झिऊण=नागरूप को छोड़कर। चलंत=चंचल। कुंडल=कुण्डल। आभरण=आभूषण। वरेसु वरं=वरदान माँगो। तुहोवयारेण=तुम्हारे उपकार से। साहसेण=साहस से। संतुट्ठम्हि=सन्तुष्ट हूँ। तहारूवं=उसके रूप को। भासुरसरीरं=चमकीला शरीर। पिच्छिऊण=देखकर। हरिसभरनिब्भरंगी=हर्ष प्रपूरित होकर। विन्नवेइ=विनय की। सच्चं=सचमुच। तुट्ठोसि=आप सन्तुष्ट

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हैं। मज्झुवरिच्छायं=मेरे ऊपर छाया कीजिए। जेणायवेणापरि-भूया=जिससे सूर्यताप से बचकर। उवविट्ठा=बैठकर।

गारुडिकों के चले जाने के पश्चात् विद्युत्प्रभा ने उस सर्प से कहा—"अब तुम यहाँ से निकलो, तुम्हारे वैरी यहाँ से चले गये हैं।" वह सर्प भी उसकी गोदी से निकलकर अपना नागरूप छोड़कर कुण्डल आदि आभूषणों से सुसज्जित सुर रूप को प्रकट कर बोला—"वत्से, कोई वरदान माँगो, क्योंकि मैं तुम्हारे उपकार एवं साहस से सन्तुष्ट हूँ।" विद्युत्प्रभा भी उसके नागकुमार के देवरूप एवं भास्वर शरीर को देखकर हर्ष-प्रपूरित हो विनयपूर्वक बोली—"हे तात, यदि सचमुच ही आप सन्तुष्ट हैं, तब मेरे ऊपर (ऐसी) छाया कीजिये, जिससे सूर्य-ताप से बचकर सुखपूर्वक शीतल-छाया में बैठकर गायों को चरा सकूँ।"

[११] वीसंमियं=विस्मित होकर। एसा=ऐसी। सरल-सहावा=सरल स्वभावी। ममाओवि=मुझसे भी ऐसा (तुच्छ)। वराई=बेचारी। अहिलसियं=अभिलाषा को। आरामो=वाटिका। महल्लसालद्दुम=महाशालवृक्ष। फुल्लगंधंधपुप्फंधय=विकसित पुष्पों की गन्ध में अन्धा हुआ भ्रमर। गीय=गीत। च्छायाभिरामो=सुन्दर (शीतल) छाया। सरसप्फलेहिं=सरस फलों से। पीणेइ=सन्तुष्ट। पाणिगणे=प्राणिसमूह। सयावि=निरन्तर। निवेइयं=निवेदन किया। जत्थ-जत्थ=जहाँ-जहाँ। वच्चिहिसि=जाओगी। महमाहप्पाओ=महिमाशाली। गमिही=जाएगा। गेहाइगयाए=घर में रहते समय। इच्छाए=इच्छापूर्वक। अत्ताणं=अपने आपको। संखेविय=छोटा बनाकर। च्छत्तुव्व=छत्र के समान। चिट्ठिस्सइ=रहेगा। तुमईए=तुम्हारे लिए। संजायपओयणाए=किसी प्रयोजनवश। आवइ-काले=आपत्तिकाल में। सरेयव्वु=स्मरण करो। सट्ठाणं=अपने स्थान को।

यह सुनकर देव अपने मन में विस्मित हुआ और विचार करने लगा कि—"अरे यह बेचारी कैसी सरल स्वभावी है, जो मुझसे भी ऐसा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(तुच्छ) वरदान माँगती है। किन्तु, कोई बात नहीं, मैं इसकी यह अभिलाषा भी पूर्ण कर देता हूँ और उसने उसके (शरीर के) ऊपर एक ऐसा वगीचा बना दिया, जो महाशालवृक्षों से सुशोभित भ्रमरों से युक्त विकसित पुष्प वाला, ध्वजापताकाओं एवं मनोहर संगीत से युक्त, सुन्दर शीतल छाया वाला, और सरस फलों से निरन्तर प्राणि-समूहों को सन्तुष्ट करता रहेगा।" तत्पश्चात् देव ने उससे निवेदन किया—"पुत्रि, जहाँ-जहाँ तुम जाओगी, वहाँ-वहाँ महिमाशाली यह बगीचा भी तुम्हारे साथ-साथ चलेगा और घर में रहते समय तुम्हारी इच्छापूर्वक अपने आप छोटा बनकर छाता के समान ही यह तुम्हारे ऊपर छाया रहेगा। किसी भी प्रकार के विपत्ति-काल में मेरी आवश्यकता होने पर तुम मेरा स्मरण करना। मैं तुरन्त चला आऊँगा।" इस प्रकार कहकर वह नागकुमार अपने स्थान को लौट गया।

[१२] तस्सारामस्सामयरससरसाणि=उस बगीचे के अमृत के समान सरस। फलाणि=फलों को। जहिच्छं=यथेच्छ। विगयच्छुहतण्हा=भूख-प्यास शान्त करना। वालिऊण=मोड़कर। पत्ता=पहुँची। च्छाइऊण=छाया करके। कुणसु=कर लो। वज्जरियं=निर्भीकता पूर्वक कहा। नियसयणीए=अपने विस्तर पर। निद्दासुहमणुहवइ=सुख की नींद सो गई। पच्चूससमए=प्रातः काल। आरण्णं=आरण्य। कुव्वंतीए=करती हुई। अइक्कंताणि=व्यतीत। कइवइदिणाइं=कतिपय दिन।

वह विद्युत्प्रभा भी उस बगीचे के अमृत के समान सरस फलों को यथेच्छ खाती हुई, अपनी भूख-प्यास को शान्त करती हुई पूरे दिन वहीं रहने लगी। रात्रि में पुनः गायों को मोड़कर (वापस लेकर) अपने भवन में लौटती। वह वगीचा भी उसके घर में छाया कर चारों ओर स्थित हो जाता। माता उससे कहती—"पुत्रि, भोजन कर लो।" उसे सुनकर वह निर्भीकतापूर्वक कहती—"आज मुझे भूख नहीं है।" यह कहकर वह अपने विस्तर पर सुख की नींद सो जाती। प्रातः काल होने पर वह पुनः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गायों को लेती और जंगल में चली जाती। वह बगीचा भी उसके पीछे-पीछे चल देता। इसी क्रम से उसने कई दिन व्यतीत कर दिये।

[१३] सुहप्पसुत्ताए=सुखपूर्वक सो रही थी। सिरिपाडलपुराहिवो=श्री पाटलिपुत्रनरेश। चउरंगबलकलिओ=चतुरंगिणी सेना सहित। विजयजत्ताए=विजय-यात्रा से। पडिनियत्तो=लौटते समय। जियसत्तु=जितशत्रु। अक्खित्तचित्तो=आकर्षित चित्तवाला। मंतिं=मन्त्री को। खंधावारनिवासत्थमाइसइ=स्कन्धावार का पड़ाव वहीं डालने का आदेश दिया। निआसणं=अपना आसन। चूयतरु=आम्रवृक्ष। सयमुवविसइ=स्वयं बैठ गया। सिन्नंपि=सेना भी। चउद्दिसिंपि=चारों दिशाओं में। अविय=और भी।

तरलतरंगवलच्छा=तरल तरंगों वाले वल्ख जाति के घोड़े। बज्झंति=बाँध दिए। समंतओ=चारों ओर से। कविकालं=अल्पकाल में। विज्जंति=होना, (रखना)। पल्लाणज्जुया=पलानों सहित। साहासु=शाखाओं से ॥ ९ ॥

बज्झंति=बाँधना। निविडथुडपायवेसु=बड़े-बड़े ठूँठों एवं वृक्षों से। मयमत्त=मदोन्मत्त। दंतिपंतीओ=हाथियों की पंक्ति। वसह=वैल। करहाइ=ऊँट आदि। परंपराओ=क्रमशः। ठविज्जंति=स्थित कर दिया ॥१०॥

किसी एक दिन मध्याह्न के समय जब वह सुख की नींद सो रही थी, तभी जितशत्रु नामक पाटलिपुत्रनरेश अपनी चतुरंगिणी सेना सहित विजय-यात्रा से लौटते समय वहाँ आया। उस बगीचे की रमणीकता से आकर्षित होकर उसने अपने स्कन्धावार का पड़ाव वहीं डालने के लिए मन्त्री को आदेश दिया और अपना आसन एक सुन्दर आम्रवृक्ष के नीचे जमाकर उस पर स्वयं वैठ गया। उसकी सेना भी चारों दिशाओं में ठहर गई। और भी, (कहा भी गया है)—

चंचल तरंगों के समान वल्ख जाति के घोड़े पलानों सहित अल्पकाल

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

में ही वृक्षों की मूल वाली शाखाओं से चारों ओर से बाँध दिए गए। ॥९॥

मदोन्मत्त हाथियों को पंक्तिबद्ध रूप में वृक्षों के बड़े-बड़े ठूँठों से बाँध दिया गया। इसी प्रकार बैल, ऊँट आदि वाहनों को भी क्रमशः बाँध दिया गया। ॥१०॥

[१४] सिन्नकोलाहलेण=सेना के कोलाहल से। विज्जुपहा=विद्युतप्रभा। विगयनिद्दा=नींद टूट गई। करहाइपलोयण=ऊँट आदि को देखने से। बालणट्ठा=वापिस करने के लिए। तुरियतुरियं=शीघ्रातिशीघ्र। पिक्खंत=देखती हुई। पहाविया=दौड़ने लगी। करभतुरियाइसमेओ=हाथी-घोड़े सहित। पत्थिओ=चलने लगा। ससंभंतो=संत्रस्त। किंमेयमच्छरियं=यह क्या आश्चर्य है। करसंपुडो=करसंपुट। विन्नवेइ=विनयपूर्वक निवेदन किया। वियक्केमि=सोचता हूँ। चमढंती=मीड़ती हुई। इमीए=इसी के। सद्धिं=साथ। माहप्पमेयमेईए=इसके माहात्म्य से। संभाविज्जइ=संभावना है। देवंगणा=देवांगना। निमेसुम्मेसभावेण=पलकों के उठने-गिरने के स्वभाव से। नूणमणेसा=निश्चय ही यह। माणुसी=मानुषी।

उसी समय सेना के कोलाहल से विद्युत्प्रभा की नींद टूट गई और वह उठ बैठी। ऊँट आदि के देखने से उठकर दूर भागती हुई गायों को देखकर, उन्हें वापि.. करने हेतु वह राजा आदि को देखती हुई भी तेज दौड़ने लगी। उसके साथ, हाथी-घोड़े आदि के साथ वह बगीचा भी चलने लगा। तब सन्त्रस्त्र हुआ वह राजा भी परिजनों सहित उठा, और—"अरे, यह क्या आश्चर्य है!" इस प्रकार मन्त्री से पूछने लगा। उसने भी दोनों हाथ जोड़कर राजा से निवेदन किया कि—"हे देव, मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि इस स्थान से सोकर उठी हुई, दोनों हाथों से आँखें मीड़ती हुई जो यह बाला दौड़ी जा रही है, इसी के साथ यह बगीचा भी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दौड़ रहा है। अतः इसी के प्रभाव से इस वगीचे के दौड़ने की सम्भावना की जा सकती है। इस कन्या के देवांगना होने की सम्भावना नहीं की जा सकती, क्योंकि नेत्रों की पलकों के उठने-गिरने से निश्चय ही यह मानुषी है।

[१५] रण्णा=राजा। मंतिराय=मन्त्रिराज। समीवमाणेह=हमारे समीप ले आओ। धाविऊण=दौड़कर। तस्सद्दस्सवणेण=उसके शब्दों को सुनकर। आरामसहिया=बगीचा सहित। दूरं गयाओ=दूर चली गई हैं। नियअस्सवारे=अपने घुड़सवारों को। पेसिऊण=भेजकर। आणावियाओ=लौटवा दिया। रायसयासमाणीया=राजा के समीप लाई गई। चंगमगमवलोइय=सुन्दर एवं स्वस्थ देखकर। निच्छीय=निश्चय करके। साणुराओ=अनुराग सहित। मंतिसंमुहमवलोएइ=मन्त्री की तरफ देखने लगा। मणोभिप्पायं=मन के अभिप्राय को। वज्जरिया=कहा।

नमिर=नम्रीभूत। अमंद=अमन्द। मयरंद=मकरन्द। कमग्गं=क्रमाग्र, क्रमशः आगे-आगे। रज्जसिरिइ=राज्यश्री। वरं=वर (दूल्हा)। वरसु=वरण करो।।११।।

तब राजा ने कहा—"मन्त्रिराज, इसे हमारे समीप ले आओ।" मन्त्री ने भी दौड़कर उसे आवाज दी। विद्युत्प्रभा भी उसकी आवाज सुनकर बगीचे सहित वहाँ ठहर गई। तत्पश्चात् "यहाँ आओ" ऐसा मन्त्री के द्वारा कहे जाने पर उसने उत्तर दिया—"मेरी गायें दूर भाग गई हैं।" यह सुनकर मन्त्री ने अपने घुड़सवारों को भेजकर गायों को लौटवा दिया। विद्युत्प्रभा को भी बगीचे सहित राजा के समीप लाया गया। राजा भी उसे सर्वांग स्वस्थ एवं सुन्दर देखकर तथा उसे 'कुमारी है' ऐसा निश्चय कर अनुराग सहित (साभिप्राय) मन्त्री की तरफ देखने लगा। मन्त्री भी राजा के मन का अभिप्राय जानकर विद्युत्प्रभा से बोला—"हे विद्युत्प्रभा! नरेश्वर एवं देवों के दैदीप्यमान मुकुट जिसके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आगे क्रम-क्रम से नम्रीभूत रहा करते हैं तथा समस्त राज्यश्री ने जिसका वरण किया है, उस श्रेष्ठ वर का वरण कर सुखभोग करो।"॥११॥

[१६] सवसा=अपने वश में। जणणिजणयाणमायत्ता=माता-पिता के अधीन। पिया=पिता। कत्थ=कहाँ। वसइ=निवास करना। संलत्तं=उत्तर में कहा। अग्गिसम्मो=अग्नि-शर्मा। माहणो=ब्राह्मण। परिवसइ=परिवार निवास करता है। तत्थ=वहाँ। आइट्ठो=आदेश दिया। सागयवयणपुरस्सरं=स्वागत-वचन आदि के बाद। पसीय=कृपा। आइसह=आदेश दीजिए।

तब विद्युत्प्रभा ने कहा—"इसका उत्तर देना मेरे अधिकार में नहीं है, किन्तु वह मेरे माता-पिता के ही अधीन है।" तब मन्त्री ने कहा—"तुम्हारे पिता कौन हैं एवं वे कहाँ निवास करते हैं ?" विद्युत्प्रभा ने उत्तर में कहा—"इसी ग्राम में अग्निशर्मा नामक ब्राह्मण-परिवार निवास करता है (मैं उसी कुल की कन्या हूँ)।" तब मन्त्री को उसके पास जाने के लिए राजा ने आदेश दिया। वह भी उस बलासक नामक ग्राम में जाकर उस ब्राह्मण-परिवार के घर पहुँचा। ब्राह्मण ने भी स्वागत-वचन आदि के बाद आसन पर बैठकर उससे कहा—"जो मेरे करने योग्य हो कृपाकर मुझे आदेश दीजिये।"

[१७] अमच्चेण=अमात्य के द्वारा। कन्नगा=कन्या। सामिणो=स्वामी के लिए। दिज्जउ=दीजिए। पडिस्सुयं=वचन स्वीकार कर लिया। जीवियमवि=जीवन भी। देवस्स=देव (स्वामी) के। संतियं=अधिकार में है। पायमवधारेसु=चरणों को धरो (चलो)। दिन्नासीवयणो=आशीर्वचन दिया। बाहरियं=समस्त समाचार। सहत्थदिन्नासणे=अपने हाथ से आसन दिया। कालविलंबमसहमाणेण=समय का विलम्ब सहन नहीं करता हुआ। गंधव्वविवाहेण=गन्धर्व-विवाह के द्वारा। परिणीया=परिणय कर लिया। पुव्विल्लयं=पूर्वगत। परावत्तिऊण=परिवर्त्तन करके। आरामसोहं=आरामशोभा को।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कयं=कर लिया (रख लिया)। दुवालस=द्वादश (बारह)। दाऊण=देकर। पणइणिं=प्रियतमा को। हत्थिखंधे=हाथी के कन्धे पर। आरोविऊण=सवार करके। पत्थिओ=चलना, जाना। पमोयमुव्वहंतो=अत्यन्त प्रसन्नचित्त होकर।

कप्पलइव्व=कल्पलता के समान। इमोए=इस प्रकार। लंभेण=प्राप्त करके। कयत्थमप्पाणं=अपने को कृतार्थं। मन्नइ=माना। अहवा=अथवा। वंछियलाहाओ=वांछित मनोरथ को प्राप्त करके। तूसेइ=सन्तुष्ट होता है ॥१२॥

सिंगार=श्रृंगार। दिव्वाणुभाव=दिव्य हाव-भाव। कलियाए=मनोहारी। चुज्जं=आश्चर्य। भूवइणो=ब्रह्मा। हरियं=हरण कर लिया। हिययं=हृदय का ॥१३॥

मन्त्री ने कहा—"आपकी यदि कोई कन्या हो, तो उसका विवाह हमारे स्वामी (राजा) के साथ कर दीजिये।" ब्राह्मण ने भी "दे दी" कह कर उसका वचन स्वीकार कर लिया और कहा कि "जब हमारा जीवन भी आपके स्वामी के अधिकार में है तब फिर कन्या की तो बात ही क्या ?" यह सुनकर मन्त्री ने कहा—"तुम हमारे स्वामी के पास चलो।" वह ब्राह्मण भी मन्त्री की बात मानकर राजा के समीप पहुँचा और उसे आशीर्वचन दिया। मन्त्री ने समस्त समाचार राजा से कह सुनाया। तब राजा ने स्वयं अपने हाथ से आसन देकर ब्राह्मण को उस पर बैठाया। राजा को समय का विलम्ब सहनीय नहीं हुआ और उसने गान्धर्व-विवाह पद्धति से उसकी कन्या के साथ परिणय कर लिया एवं पूर्वागत नाम में परिवर्तन कर उसका (नया) नाम 'आरामशोभा' रख दिया। ब्राह्मण के लिए भी बारह गाँव देकर वह राजा अपनी प्रियतमा 'आरामशोभा' को हाथी पर सवार कर अत्यन्त प्रसन्नचित्त होकर अपने नगर की ओर चला।

इस प्रकार, कल्पलता के समान आरामशोभा को प्राप्त कर राजा ने अपने को कृतार्थ माना, अथवा, मनोरथ को पूर्णरूप से प्राप्तकर कौन सन्तोष को प्राप्त न होगा ? ॥१२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दिव्य हाव-भावों से युक्त एवं शृंगाररूपी तरंगोंवाली उस तरंगिणी विद्युत्प्रभा के मनोहारी हृदय का निर्माण ब्रह्मा ने यदि विशिष्ट तत्त्वों से किया हो, तो इसमें आश्चर्य ही क्या ? ॥१३॥

[१८] मंचाइमंच=रंगमंच से युक्त। कालागुरु=एक प्रकार की चन्दन मिश्रित धूप। कुंदरुक्क=सुगन्धित पदार्थ। तुरुक्कधूव=तुर्किस्तानी धूप। उब्भामियधयवडालोयं=फहराती हुई ध्वजा-पताकाओं से युक्त। उल्लासिय=उल्लसित। तिय=तिमुहानी। चउक्क=चौमुहानी। चच्चर=चर्चरी (एक प्रकार का नृत्य)। चउम्मुह=चतुर्मुख। अउव्व=अपूर्व। नाडयं=नाटक। ठाण=स्थान। ठविय=स्थित। पुण्णकलसं=पूर्ण कलशों से। वण्णिजं-जंतो=वर्णनीय। सयसहयर=सैकड़ों सहचर। पणइणी=प्रिय-तमा। कलिओ=सहित। महाविभूइए=महान विभूतियों से। पाडलिपुरं=पाटलिपुत्र में। पुढो=पृथक्। पासाए=प्रासाद में। ठाविया=ठहराया गया। पासायं आवरिय=प्रासाद में छा गया। समंतओ=चारों ओर। परिहरिया=त्याग करके। वावारो=व्यापार को। दोगुंदुगसुरेवि=श्रेष्ठ जाति के देवों को भी। अवमन्नंतो=तिरस्कृत करता हुआ। निमेसमित्तं=क्षण के समान। कालं अवक्कमइ=समय व्यतीत करने लगा।

कालागुरु, कुंदरुक्क (सुगन्धित पदार्थ विशेष) एवं तुर्किस्तानी धूप की विस्तृत सुगन्धि से मिश्रित रंगमंच से युक्त, फहराती हुई ध्वजापताकाओं से युक्त, उल्लसित वन्दन-मालाओं से युक्त, त्रिमुहानियों, चौमुहानियों पर चर्चरी एवं चौमुखे होने वाले अपूर्व नाटकों से युक्त, बहुत से स्थानों पर स्थित पूर्णकलशों से युक्त, सैकड़ों सहचरों के साथ, बगीचे के आश्चर्यपूर्ण विकसित पुष्पों के समान विकसित कमलनेत्र वाली आरामशोभा के साथ नारी-समूहों के द्वारा प्रशंसित प्रियतमा के साथ महान् विभूतियों से समृद्ध वह महाराज जितशत्रु पाटलिपुत्र में प्रविष्ट हुआ। उस आरामशोभा को एक अलग (विशिष्ट) राजमहल में ठहराया गया। (उसके साथ) वह बगीचा भी संकुचित होकर राजमहल के चारों

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ओर दिव्यरूप में छा गया। राजा भी अपने समस्त कार्य-व्यापारों को छोड़ उसके साथ (सुखद) भोग भोगता हुआ, श्रेष्ठ जातीय देवों को भी तिरस्कृत करता हुआ, अपना समय क्षण के समान व्यतीत करने लगा।

[१९] सवक्किमायाए=सौतेली माता की। धूया=पुत्री। कमेण=क्रम से। जुव्वणमणुपत्ता=युवावस्था को प्राप्त हुई। तहावत्थं=उस अवस्था को। दट्ठूण=देखकर। दुट्ठा=दुष्टा। पओएण=प्रयोजन से। मरइ=मृत्यु को प्राप्त। गुणक्खित्त=गुणों से आकृष्ट। परिणेइ=विवाह करना। मणोरहभूरुहो=मनोरथ रूपी वृक्ष में। नियदइयो=अपने पति को। परिभाविऊण=विचार करके। वाहरिओ=बुलाया। वच्छाए=वत्सा (पुत्री) को। बहुकालो=बहुत समय। वइक्कंतो=व्यतीत हो गया। अओ=अतः। तीसे=उसके। भक्खभुज्जाइअं=पकवान आदि भोजन। जुज्जइ=उपयुक्त। पिउहरपाहुडेण=पितृगृह के उपहार से।

और इधर, आरामशोभा की सौतेली माँ के एक पुत्री उत्पन्न हुई। वह क्रम से युवावस्था को प्राप्त हुई। आरामशोभा को उस सुखद अवस्था में देखकर उस दुष्टा सौतेली माता ने अपने मन में विचार किया—"यदि किसी प्रयोजन से यह आरामशोभा मृत्यु को प्राप्त हो जाय, तब राजा इसके गुणों से आकृष्ट होकर मेरी पुत्री के साथ विवाह कर लेगा। तब मैं भी अपने मनोरथ रूपी वृक्ष को लगाने में पूर्ण सफल हो सकूँगी।" ऐसा विचार कर उसने अपने पति से कहा—"हे नाथ, पुत्री (आरामशोभा) के विवाह के लिए बहुत समय व्यतीत हो गया। अतः उसके लिए कुछ मिष्ठान्न आदि भेज देना योग्य होगा, क्योंकि उस कन्या का भी पितृगृह के इस उपहार से चित्त प्रसन्न हो जायगा।"

[२०] भट्टेण=ब्राह्मण ने। ऊणय=कमी। परं अहं एयं=परन्तु मैं इसे। वियाणेमि=जानता हूँ। कप्पदुम्मस=कल्पवृक्ष के लिए। बोरकरीराई=बेर, करील फल आदि। पेसण=भेजना। वइरागरसस्स=वैराग्य रस वाले के लिए। कायखंड-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मंडणं=शारीरिक अंगों को अलंकृत करना। मेरुस्स=पर्वत के लिए। सिलायलेहिं=शिलाखण्डों के द्वारा। दिढयरणं=दृढ़ करना। पज्जोयणस्स=सूर्य के लिए। खज्जोय=जुगनू। पोय=कीट। उवमा=उपमा। अणुचियं=अनुचित। मुहे=मुख पर। हत्थं=हाथ। दाऊण=रखकर। उवहसिस्सइ=उपहास करेंगे। पावाए संलित्तं=पाप में लिप्त। परं=किन्तु। अम्हाणं हमारी। निव्वुई=निश्चिन्तता (तृप्ति)। अग्गहं=आग्रह।

यह सुनकर उस भट्ट ब्राह्मण ने कहा—"प्रिये, उसे किसी भी वस्तु की कमी नहीं है। यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि जिस प्रकार कल्पवृक्ष के लिए बेर तथा करीर आदि के फल भेजना, वैराग्यरस वाले के शरीर को अलंकृत करना, मेरु-पर्वत के लिए शिलाखण्डों द्वारा दृढ़ करना, सूर्य के लिए जुगनुओं जैसे कीटों की उपमा देना उचित नहीं होता, ठीक उसी प्रकार विद्युत्प्रभा (आरामशोभा) के लिए हमारा मिष्ठान्न आदि का भेजना भी योग्य नहीं होगा। बल्कि उससे राजा के लोग मुँह पर हाथ रख-रखकर हँसेंगे।" यह सुनकर उस पापिनी ने पुनः कहा—"निश्चय ही उसे किसी वस्तु की कमी नहीं है किन्तु भेंट भेजकर हमें तो तृप्ति होगी ही।" उसका अत्याग्रह देखकर ब्राह्मण ने भी 'तथास्तु' कहकर उसे स्वीकार कर लिया।

[२१] सिंहकेसरीमोदगा=सिंहकेशरी नामक लड्डू। महुरयेण=मधुर-विष को। पक्खित्ता=रख दिए। नवकलसे=नवीन कलश में। तम्मुहं=उसके मुख को। मुद्दिऊण=बाँध दिया। भत्ता=पति। विन्नतो=विनती की। पंथे=रास्ते में। पच्चवाओ=विघ्न की उपस्थिति। सयं=स्वयं। गहिय=ग्रहण करके। वच्चसु=जाओ। वेयजडो=वेदजड़। मिंढसिंगंव=भेड़ के सींग के समान। अमुणंतो=न समझता हुआ। अन्नस्स=अन्य किसी के लिए। एयस्स=इसकी। विरूवत्तेण=विरूपता से, क्षुद्रता से। हसउ=हँसेंगे।

ब्राह्मणी ने हर्षित मन से बहुत प्रकार की सामग्री जुटाकर सिंह-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

केशरी नामक लड्डू बनाये तथा उनमें विष मिला दिया। उन लड्डुओं को एक नवीन घड़े में रख दिया और उसके मुँह को बाँधकर उसने अपने पति से निवेदन किया—"रास्ते में कोई विघ्न उपस्थित न हो इसलिए इसे लेकर तुम स्वयं जाओ।" तब भेंड़ के सींगों के समान कुटिल उसके मन को ठीक से न समझ सकने वाला वह वेद-जड़ ब्राह्मण भी उस घड़े को अपने सिर पर रखकर जब प्रस्थान करने लगा, तब उस (ब्राह्मणी) ने कहा—"यह भेंट आरामशोभा के हाथों में ही देकर उससे कहना कि वत्से, इसे तुम ही खाना, किसी दूसरे को मत देना। अन्यथा मेरे इस विरूप क्षुद्र मिष्ठान्न को देखकर राजा के लोग हँसी-मजाक उड़ाएँगे।" वह ब्राह्मण भी 'तथास्तु' कहकर वहाँ से चल दिया।

[२२] मंदपयपयारेण=धीरे-धीरे। वच्चंतो=चलते हुए। ओसीसए=सिरहाने। कइवइदिणेसु=कतिपय दिनों में। पत्तो =पहुँचा। पाडलिपुत्त-आसन्न=पाटलिपुत्र के निकट में। महल्लवडपायवस्स तले=महान् वटवृक्ष के नीचे। उस्सीसए= सिरहाने। दाऊण=रखकर। इत्थंतरे=इसी बीच में। दिव्व-जोगेण=दैवयोग से। कीलणत्थमागएण=क्रीड़ा हेतु वहाँ आया। मणुसो=मनुष्य। कलसम्मि=कलश में। किंअत्थि=क्या है। नाणं=ज्ञान। पउंजिय=प्रयोग करके। वुत्तंतो=वृत्तान्त। पिच्छह=देखो। सवत्ति=सौतेली। दुट्ठचिट्ठियं=दुष्ट चेष्टा, चित्त की दुष्टता। एरिसं=ऐसा। ववसियं=कार्य किया। विज्जमाणे=विद्यमान (रहते हुए)। विरूवं=अनिष्ट। वीमंसिय =विचार करके। अवहरिय=अपहरण करके। अमयमोयगेहिं अमृत-मिश्रित लड्डुओं से।

धीरे-धीरे चलते-चलते सन्ध्या हो जाने पर वह सो जाता और सोते समय उस घड़े को अपने सिरहाने रख लेता। इस प्रकार कुछ ही दिनों में वह पाटलिपुत्र के निकटवर्ती एक महान् वटवृक्ष के नीचे पहुँचा तथा वहाँ भी वह उस घड़े को सिरहाने रखकर सो गया। इसी बीच दैवयोग से वही पूर्वोक्त नागकुमार क्रीड़ा हेतु वहाँ आया एवं उस ब्राह्मण को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देखकर विचार करने लगा—"यह व्यक्ति कौन है, इस कलश में क्या लिये हुए है ?" उसने अपने विशिष्ट ज्ञान का प्रयोग कर उस पापिनी ब्राह्मणी के मन का समस्त वृतान्त जान लिया और मन में सोचने लगा —"अहो, सौतेली माता के चित्त की दुष्टता तो देखो, जिसने सरल स्वभाव वाली उस आरामशोभा के साथ ऐसा अनर्थकारी कार्य किया है। किन्तु मेरे रहते हुए उसका कुछ भी अनिष्ट नहीं हो सकता।" ऐसा विचारकर उसने विषमिश्रित लड्डुओं का अपहरण कर उसके स्थान पर कलश को अमृत-लड्डुओं से भर दिया।

[२३] सुत्तविउद्धो=नींद खुली। रायदुवारं=राजदरबार में। पडिहारनिवेइओ=प्रतिहारी से निवेदन किया। राय-सगासं=राजा के समीप। गंतूण=पहुँचकर। दिन्नासीसो= आशीर्वाद दिया। रायवामपासट्ठियाए=राजा के बाईं ओर स्थित। समप्पेइ=समर्पित किया। विन्नत्तं=निवेदन किया। वच्छामाउयाए=बच्ची की माँ ने। जारिसं-तारिसं=जैसे-तैसे। जणणीणेहेण=मातृ-प्रेमवश। भुत्तव्वं=खाना चाहिए। राय-लोयमज्झे=राजदरबारियों के बीच।

तत्पश्चात् प्रातःकाल होते ही जब उस ब्राह्मण की नींद खुली तब वह उठकर राजदरबार में पहुँचा। उसने प्रतिहारी से निवेदन किया और राजा के समीप पहुँचकर उसे आशीर्वाद दिया तथा उपहार-स्वरूप लड्डुओं से भरा हुआ वह कलश राजा के बाँयी ओर स्थित आरामशोभा को समर्पित कर दिया। उसने राजा से भी कहा—"महाराज, बच्ची (आरामशोभा) की माँ (ब्राह्मणी) ने निवेदन किया है कि 'इस भेंट को मैंने जैसे-तैसे मातृ-प्रेमवश भेजा है। अतः इसे पुत्री ही खावे, अन्य दूसरे के लिए न दिया जावे, जिससे कि राजदरबारियों के सम्मुख मैं उपहास की पात्र न बनूं। मेरे इस कथन का कोई बुरा भी न माने'।"

[२४] रण्णा=राजा ने। निरिक्खयं=देखा। सिरंमि= सिर पर। सभवणे=अपने भवन में। कलसो=कलश। माहणो =ब्राह्मण को। अत्थाणाओ=स्थान से। सुहासणासीणो=

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुखासन पर बैठा हुआ। विन्नत्तो=विनती की, कहा।

नियनयणे=अपने नेत्रों से। निअह=देखिए। इत्थ=इस। अवणिज्जइ=अवर्णनीय। मुद्दा=बन्द मुद्रा। सुच्चा=सुनकर। भूवो वि=राजा ने भी ॥१४॥

मह मणदइए=मेरे मन (हृदय) की रानी। कुवियप्पं=कुतर्क। पमाणं=प्रमाण। उग्घाडेसु=उघाड़ो (खोलो)। घडमेयं=उस कलश को ॥१५॥

यह सुनकर राजा ने देवी आरामशोभा के मुखकमल की ओर देखा। उसने भी दासी के सिर पर उस कलश को रखकर उसे अपने महल में भेज दिया। राजा ने ब्राह्मण को स्वर्ण, रत्न एवं वस्त्र के दान से सन्तुष्ट किया और स्वयं वह (राजा) अपने स्थान से उठकर देवी आरामशोभा के भवन में गया। वहाँ सुखासन पर बैठ गया। देवी आरामशोभा ने (उसी समय राजा से) कहा—

"प्रियतम, मेरे ऊपर कृपा करके स्वयं अपने नेत्रों से इस मुद्रित कलश को देखिए। क्योंकि यह अवर्णनीय है।" यह सुनकर राजा ने भी उत्तर में कहा—॥१४॥

"हे प्रिये, मेरे हृदय की रानी, अपने हृदय में किसी भी प्रकार का कुविकल्प मत करो। वही (कलश) हमारे लिए प्रमाण है। अतः अब उस मुद्रित कलश का मुख खोलो।" ॥१५॥

[२५] माणुस्सलोयदुल्लहो=मनुष्य लोक के लिए दुर्लभ। परिमलो=सुगन्धि। समुल्लसिओ=उल्लसित (प्रसन्न) हुआ। महमहियं=सुगन्धित। महप्पमाणे=बहुत अधिक। तप्पसंसं=उसने प्रशंसा। कुणेइ=की। मोयग=मोदक (लड्डू)। आसायणं=आस्वादन। इक्किक्कं=एक-एक। भइणीणं=बहनों को। विन्नाणसालिणी=विज्ञानशालिनी, चतुर। संतोसं=सन्तुष्ट।

इसके बाद उस घड़े को जब आरामशोभा ने खोला तब उसमें से मनुष्य-लोक के लिए दुर्लभ दिव्य-सुगन्धि निकली, जिससे समस्त राजभवन सुवासित हो उठा। बहुत अधिक मोदकों को देखकर वह राजा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भी सन्तुष्ट हुआ तथा उन्हें खाकर उसने बड़ी प्रशंसा की और बोला—"मैंने तो राजा होकर भी ऐसे विशिष्ट स्वाद वाले मोदकों का कभी भी आस्वादन नहीं किया। इनमें से एक-एक लड्डू अपनी बहिनों (अन्य रानियों) को भी भेजो।" आरामशोभा ने राजा के आदेशानुसार वैसा ही किया। इससे राजदरबार में आरामशोभा की माँ की इस प्रकार प्रशंसा होने लगी—"अरे, वह तो बड़ी ही चतुर है, जिसने देवों के लिए भी अत्यन्त दुर्लभ लड्डू बनाकर भेजे हैं।" इस प्रकार अपनी माँ की प्रशंसा सुनकर आरामशोभा बहुत ही सन्तुष्ट हुई।

[२६] विन्नतो=विनय की। पिउहरं=पितृगृह (नैहर)। थोवकालेणवि=थोड़े समय के लिए भी। पासमुवेइ=वापिस आ सके। पडिनिसिद्धो=अस्वीकार करना। रायभारियाओ=रानियाँ। मत्तंडमंडल=सूर्य-मण्डल। सगिहं=अपने घर। पावा=पापिनी। वज्जाहयव्व=वज्राहत के समान। उच्छूपुप्फं=इक्षुपुष्प। उवक्कमो=उद्यम। महुरो=मधुर-विष।

उसी समय अग्निशर्मा ने राजा से विनय की—"देव, मेरी पुत्री को नैहर भेज दीजिये, जिससे कि वह थोड़े समय के लिए भी माता से मिलकर तुम्हारे पास वापिस आ सके।" राजा ने उसे ले जाने से मना कर दिया। उसने स्पष्ट कहा कि—"रानियाँ तो कभी सूर्य का भी दर्शन नहीं कर सकतीं, फिर नैहर जाने की तो बात ही क्या?" राजा का उत्तर सुनकर वह भट्ट अपने घर लौट गया और समस्त वृतान्त अपनी पत्नी को कह सुनाया। यह सुन वह पापिनी वज्राहत की तरह होकर विचार करने लगी—"धिक्कार है, इक्षु-पुष्प के समान ही मेरा उद्यम निष्फल हो गया। प्रतीत होता है कि वह विष निश्चय ही प्राणलेवा न था।"

[२७] हालाहलमोसियाणं=हालाहल मिश्रित। फीणियाणं=फैनी (नाम की मिठाई)। करंडयं=करण्डिका (पिटारी)। विसज्जिओ=भेजा। नियदइयो=अपने पति को। पुव्वजुत्तोए पूर्व युक्ति के अनुसार ही। सुरेण=देव ने। हालाहलं अवहरियं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

=हालाहल (युक्त फैनियों) को चुरा लिया। तइयवेलं=तीसरी बार। तालउड=तालपुर (नामक विष)। मंडिय=सजाकर। भाविय=भावित कर। कय-पच्चय=पकाकर (लड्डू पकाकर)। संपयमावन्नसत्ता=गर्भवती होने के कारण। पढमो=प्रथम। पसवो=प्रसव। बंभणत्तं=ब्रह्म तेज, ब्राह्मण तेज। दंसणीयं=दिखा देना।

कुछ दिनों के पश्चात् पुनः हालाहल मिश्रित फैनी (नाम की मिठाई) से भरी हुई एक करण्डिका देकर पूर्ववत् उसने अपने पति को आरामशोभा के यहाँ भेजा। पूर्ववत् ही उस नागकुमार देव ने भी हालाहल मिश्रित उन फैनियों का अपहरण कर लिया। पूर्ववत् ही उसकी प्रशंसा भी हुई। इसी प्रकार पुनः तीसरी बार भी 'तालपुट' नामक तत्काल प्राण-नाशक विष से मिश्रित मिठाई से भरा हुआ एक कलश देकर उस दुष्टा ने ब्राह्मण से कहा, "गर्भवती होने के कारण इस बार कन्या को अवश्य ही लेते आना, जिससे उसका प्रथम प्रसव यहीं पर हो। यदि राजा किसी भी प्रकार भेजने को तैयार न हो तब वहीं उसे अपना ब्राह्मण-तेज दिखा देना।"

[२८] तव्वयणमंगीकाऊण=उसके वचन स्वीकार करके। पुव्वंव=पूर्ववत् ही। जमजीहसहोयरिं=यमराज की जिह्वा के समान। छुरिं=छुरी को। उदरोवरि=पेट के ऊपर। वाहरइ=चिल्लाना। पेसिस्सह=भेजोगे। अप्पघायं=आत्मघात। तन्निच्छयं=उसका निश्चय। मुणिऊण=जानकर। परिवारेण=परिवार से। परियरियं=सेवकों द्वारा घिरा हुआ, सेवकों द्वारा सेवित।

ब्राह्मणी के वचन स्वीकार करके वह भट्ट चला और चलते-चलते उसी वट-वृक्ष के नीचे सो गया। नागकुमार देव ने भी पूर्ववत् ही तालपुट विष से मिश्रित मिठाई का अपहरण कर लिया। तत्पश्चात् पूर्ववत् ही उसने पुत्री को उपहार देकर राजा से इस प्रकार विनती की—"पुत्री को मेरे घर भेज दीजिए।" राजा ने जब उसकी बात बिल्कुल ही

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न मानी, तब वह यमराज की जिह्वा के समान छुरी को अपने पेट के ऊपर रखकर चिल्लाने लगा—"यदि मेरी पुत्री को न भेजोगे, तब यहीं पर आत्मघात कर लूंगा।" राजा ने उसका निश्चय जानकर विस्तृत परिवार एवं सेवकों के साथ आरामशोभा को विदा कर दी।

[२९] तप्पुण्ण=उसके पुण्य से। पगरिसा=प्रकृष्ट। अमुणिय=जाने बिना। सवत्तिमाया=सौतेली माता ने। नियमंदिरपिट्ठदेसे=अपने भवन के पीछे। कूवयं=कुआ। खणाविऊण=खुदवाकर। पवंच=प्रपञ्च। तम्मज्झगयभूमिहरए=उसके बीच में बने हुए भूमिगृह में। नियधूयं=अपनी पुत्री को। नियंअभिप्पायमप्पयडंती=अपने अभिप्राय को छिपाती हुई। किंकरिव्वकज्जाइं=किंकर्त्तव्यविमूढ़।

तदनन्तर, आरामशोभा के प्रकृष्ट पुण्य-प्रताप को समझे बिना ही उसे आती हुई सुनकर सौतेली माता ने हर्षपूर्वक अपने भवन के पीछे, एक भारी कुँआ खुदवाकर, कुछ प्रपंच की बात मन में रखकर, उसके बीच में बने हुए भूमिगृह में अपनी पुत्री को ठहरा दिया। इसके बाद, सौतेली माता भी सपरिवार आई हुई उस आरामशोभा के सम्मुख अपने अभिप्राय को छिपाती हुई किंकर्त्तव्यविमूढ़ रहने लगी।

[३०] सुरकुमराणुकारं=देवपुत्र के समान। पसूया=जन्म दिया। विहिवसओ=दैववश। समीवट्ठियाए=समीप में स्थित। कायचिंतानिमित्तं=शारीरिक क्रियाओं की निवृत्ति हेतु। पच्छिमदुवारं=पिछले दरवाजे से। पलोइऊण=देखकर। अउव्वो=अपूर्व। परमपिम्ममिव=अत्यन्त प्रेम दिखाती हुई के समान। आणिज्जमाणे=लेकर आती हुई। विसाइसंकमो=विषाद (कष्ट) युक्त। कोऊहलेण=कौतूहलपूर्वक। अणुल्लहिययाए=क्षुद्र-हृदया। पणुल्लिया=धक्का दे दिया। अहोमुहा=मुँह के बल।

आरामशोभा ने देवपुत्र के समान एक कुमार को जन्म दिया। अन्य किसी समय दैववश परिजनों के दूर रहने पर समीप में स्थित सौतेली

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माता उसे शारीरिक-क्रियाओं की निवृत्ति हेतु घर के पिछले दरवाजे की ओर ले आई।

आरामशोभा ने भी वहाँ खोदे गये कुँए को देखकर कहा—"मां इसे कब खुदवाया है, यह तो बड़ा ही सुन्दर एवं गहरा है?" यह सुनकर वह अत्यन्त दिखावटी प्रेम प्रदर्शित करती हुई बोली—"वत्से, तेरा आगमन जानकर ही मैंने इसका निर्माण कराया है, जिससे कि पानी लाने के लिए बहुत दूर जाने का कष्ट न उठाना पड़े।" तब वह आरामशोभा कौतूहल-पूर्वक कुँए में झाँककर देखने लगी। उसी समय उस क्षुद्रहृदया दुष्ट-चित्ता ने उसे धक्का दे दिया, जिससे कि वह मुँह के बल ही (कुँए में) गिर पड़ी।

[३१] आवयपडियाए=आपत्ति में पड़ी हुई। समरिओ =स्मरण किया। करसंपुडणं=हाथों से। अद्धंतराले=बीच में ही। पडिच्छिया=झेल लिया। पायालभवणं=पाताल-भवन को। विउव्विय=निर्माण करके। आरामो=बगीचा। देवप्प-भावाओ=दैवी प्रभाव से। यत्ति=यात्रा। उवसामिओ= सान्त्वना देकर। सट्ठाणं=अपने निवास स्थान को।

उसी समय आपत्ति में पड़ी हुई आरामशोभा ने नागकुमार देव का स्मरण किया। उस देव ने भी वहाँ प्रकट होकर उसे पानी के ऊपर ही अपने हाथों में लेकर कुँए के मध्य में निर्मित पाताल-भवन में ठहरा दिया। उसका बगीचा भी दैवीप्रभाव से वहीं स्थिर हो गया तथा वह नागकुमार देव ब्राह्मणी के ऊपर क्रोध करता हुआ "(यहाँ से) यात्रा का प्रयत्न न करना" ऐसा कहकर तथा उसे सान्त्वना आदि देकर अपने स्थान चला गया।

[३२] पमुइयाए=प्रमुदित होकर। णवप्पसूय=नवजात शिशु। सुवारिया=सुला दिया। तप्पडिचारियाओ=उसकी परिचारिकाएँ। अप्पलावण्णं=अल्प सौन्दर्य वाली। सरिसागारं =सदृश आकृति को। धसक्कियहिययाओ=धँसे हुए हृदय से, हृदय में धक् से रह गए, भौंचक्के हो गए। संपइ=इस समय।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किं अन्नारिसीव=विरूप जैसी क्यों, अन्यमनस्क हुई के समान।

इसके बाद, उस ब्राह्मणी ने अत्यन्त प्रसन्न होकर नवजात शिशु के साथ अपनी पुत्री (विरुपा को) पलंग पर सुला दिया। क्षणमात्र में ही उसकी परिचारिकाएँ वहाँ आ गईं एवं अल्प सौन्दर्य वाली तथा कुछ-कुछ सदृश आकृति वाली अन्य किसी नारी को (शिशु के साथ) देखकर वे सभी भौंचक्की रह गयीं और बोलीं—"हे स्वामिनि, आज आप कुछ विरूप जैसी क्यों दिखाई दे रही हैं ?"

[३३] साहरइ=उत्तर में कहा। सत्थावत्थो=स्वस्थावस्था में। पडुकूडकवडनाडयनडिया=कूट-कपट, नाटक आदि के अभिनय करने में पटु। ताडयंती=पीटती हुई। पलविउं लग्गा =रोने लगी। हद्धी=हाय-हाय, धिक्कार है। मुट्ठा=चुरा लिया। दुट्ठदिव्वेणं=दुर्भाग्य ने। विसन्नाओ=विषादयुक्त। चिट्ठंति=रहने लगी।

उसने भी उत्तर कहा—"मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा, किन्तु मेरी देह स्वस्थावस्था में नहीं है।" तब भयभीत हुई उन परिचारिकाओं ने उसकी माता ब्राह्मणी के सम्मुख अपनी चिन्ता व्यक्त की। कूट-कपट, नाटक, अभिनय आदि करने में निपुण ब्राह्मणी हाथों से छाती पीटती हुई रोने लगी (और कहने लगी)—"हाय-हाय, दुष्ट दैव ने मुझे चुरा लिया, जिससे मेरी यह बच्ची विरूप दिखने लगी। अब मैं राजा को कैसे मुँह दिखाऊँगी ?" यह सब देखकर परिचारिकाएँ भी राजा के भय से अत्यन्त विषादयुक्त होकर रहने लगीं।

[३४] निवइसमाइट्ठो=नृपति (राजा) द्वारा प्रेषित। आणवेइ=आदेश दिया है। सिग्घमाणेऊण=शीघ्र ही लाकर। पत्थाणसामग्गी=प्रस्थान-सामग्री। नीरपाणट्ठं=पानी पीने हेतु। पच्छा=पीछे। आगमिस्सइ=आवेगा।

अथानन्तर, उसी समय राजा द्वारा प्रेषित एक मन्त्री वहाँ आया और बोला—"देव ने आदेश दिया है कि देवी सहित कुमार को शीघ्र ही लाकर मुझसे मिलाओ।" मन्त्री के द्वारा राजा का सन्देश सुनकर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रस्थान की समस्त सामग्रियाँ तैयार कर ली गईं। उसी समय (कृत्रिम) आरामशोभा से परिचारकों ने पूछा—"बगीचा कहाँ है?" तब उसने उत्तर में कहा—"वह आज नहीं चलेगा, मैंने उसे पानी पीने हेतु कुँए में ठहरा दिया है। अत: वह बाद में आवेगा।"

[३५] बद्धाविओ=बधाई दी। पयट्टाविया=करवाई। हट्टसोहं=बाजारों की शोभा। पारद्धं=प्रारम्भ। बद्धावणयं=बधाईयाँ। संमुहगमणेण=सम्मुख जाकर। तणओ=पुत्र को। निरूविऊण=निरूपण करके। संभंतेण=भ्रमपूर्ण होकर। पुट्ठं=पूछा। अहो=अरे। अन्नारिसिच्चिय=बदली हुई के समान। तणुसिरी=शरीर की शोभा। निरूविज्जइ=दिखाई दे रही है। हेउ=हेतु। दिट्ठिदोसेण=दृष्टि-दोष के कारण। पसूइरोगेण=प्रसूति-रोग के कारण। संवुत्तं=हो गया। सम्मं=ठीक-ठीक। सुयजम्मपमुइओवि=पुत्र जन्म के कारण प्रमुदित होने पर भी। दइयावइयरसवणओ=पत्नी का वृत्तान्त सुनकर। विच्छाओ=विषाद से। जाओ=युक्त हो गया। धीरत्तमवलंविऊण=धैर्य धारण करके।

इसके बाद उसको साथ लेकर परिजन लोग पाटलिपुत्र पहुँचे। राजा को वधाई दी। राजा ने भी प्रमुदित मन से बाजारों को सजवा दिया, बधाइयाँ प्रारम्भ हुईं। स्वयं सम्मुख जाकर उसने देवी (कृत्रिम आराम-शोभा) एवं कुमार को देखा। तभी प्रियतमा के विरूप सौंदर्य को देखकर आश्चर्यचकित होकर राजा ने उससे पूछा—"अरे, तुम्हारे शरीर का सौंदर्य विकृत क्यों दिखाई पड़ने लगा है, इसका क्या कारण है?" तब दासियों ने कहा—"महाराज, प्रसूति के समय दृष्टिदोष के कारण अथवा प्रसूति-रोग के कारण अथवा अन्य किसी कारण से इसकी देह-कान्ति कैसे विरूप हो गई, यह हम लोग भी ठीक-ठीक नहीं जान सके।" तब पुत्रोत्पत्ति के कारण अत्यन्त प्रसन्नचित होने पर भी वह राजा अपनी पत्नी का वृत्तान्त सुनकर विषाद से भर गया, फिर भी धैर्य धारण कर उसने उसके साथ नगर में प्रवेश किया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

[३६] सहयरो=सहचर। संलत्तं=उत्तर दिया। अज्ज-उत्त=आर्यपुत्र। समरिओ=स्मरण करने पर। समागमिही=आ जाएगा। पासइ=अवलोकन किया। संदेहपिसाएण=संदेह रूपी पिशाच से। अक्कमिज्जइ=आक्रान्त हो गया। अन्ना=अन्य। वुत्ता=कहा। आणेह=ले जाओ। मणाभिरामं=मनोरम। सविसेसं=विशेष रूप से। रायमणंमि=राजा के मन में। आसंका=आशंका। जाया=उत्पन्न हो गई।

एक दिन राजा ने देवी से पूछा—"प्रिये, तुम्हारा निरन्तर का सहचर वह बगीचा अब यहाँ क्यों नहीं दिखाई देता ?" उसने भी उत्तर दिया—"आर्यपुत्र, बगीचा पीछे कुँए पर पानी पी रहा है। स्मरण करने पर वह आ जाएगा।" राजा भी जब-जब उसके सर्वांग शरीर का अवलोकन करता तभी-तभी सन्देह रूपी पिशाच से वह अक्रान्त हो जाता कि क्या यह 'वही' है अथवा अन्य कोई दूसरी ? अन्य किसी दिन राजा ने पुनः रानी से कहा—"तुम उस मनोरम बाग को ले आओ।" उसने भी उत्तर दिया— "प्रियतम, उसे बाद में ले आऊँगी।" इससे राजा के मन में विशेष रूप से आशंका जागती गई।

[३७] विन्नत्तो=प्रार्थना की। सुयविरहो=पुत्र का विरह। दढं=बहुत। पीडेइ=पीड़ित कर रहा है। पसीय=कृपा। वच्छं=वत्स (पुत्र) को। पिच्छामि=देख सकूँ। वच्च=जाओ। परं=किन्तु। पासिऊण=देखकर। सिग्घमागच्छेसु=शीघ्र आ जाना। तव्वयणमंगीकयं=उसका कथन स्वीकार कर लिया। साहिया=कहा। सूरुग्गमं=सूर्योदय के समय तक। चिट्ठिहिसि=ठहरोगी। संकेओ=संकेत। नियकेसपासाओ=अपने केश-पाश से। मयनागं=मृत नाग के। पडियं=गिरा हुआ। जंपियं=कहा। एयमवि=ऐसा ही। तियसेण=देव ने। उग्घाडिऊण=खोलकर। पइट्ठा=प्रविष्ट हुई। केरिसं=कैसा था।

मणिदीवयं=मणिमय दीपक। संदोवियं=संदीप्त। सुपक्क-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

फलपूरियं=पके हुए फलों से प्रपूरित। महमहंत=अत्यधिक सुगन्ध। कप्पूरियं=कर्पूर ॥१६॥

पफुल्लकुसुमुक्करं=विकसित पुष्पों की पराग। अगरधूव=अगर एवं धूप। पणसुगंधियाडंबरं=पाँच प्रकार की सुगन्धि से व्याप्त ॥१७॥

इधर आरामशोभा ने (समय पाकर एक दिन) उस नागदेव से प्रार्थना की—"तात, पुत्र-विरह मुझे बहुत पीड़ित कर रहा है। अतः कृपा कीजिए और ऐसा उपाय करिये जिससे मैं अपने वत्स को देख सकूँ। तब उस देव ने कहा—"यदि ऐसा ही है, तब मेरे प्रभाव से (उसके पास) चली जाया करो, किन्तु पुत्र को देखकर शीघ्र ही वापस भी आ जाया करो।" आरामशोभा ने 'तथास्तु' कहकर उसका कथन स्वीकार कर लिया। इसके बाद देव ने पुनः कहा—"यदि वहाँ जाने पर तुम सूर्योदय-पर्यन्त ठहरोगी, तब उसके बाद से मेरा दर्शन तुम्हें कभी भी न हो सकेगा।" इस कथन का संकेत यह था कि "उस समय अपने केशपाश से मरकर गिरा हुआ एक सर्प देखोगी। उसके बाद तुम्हें मेरा कभी भी दर्शन न हो सकेगा।" यह सुनकर आरामशोभा ने कहा—"ऐसा ही होगा।' जैसे भी हो, एक वार अपने तनय को देख तो सकूँगी।"

इसके बाद देव ने उसे वहाँ भेज दिया। उसके प्रभाव से वहाँ निमेष-मात्र में ही पाटलिपुत्र पहुँच गई। राजा का निवास-स्थान खोलकर वह भीतर प्रविष्ट हुई। कैसा था वह राजभवन—

स्वर्ण-वर्ण की कान्ति से संदीप्त, जहाँ मणिमय दीपक प्रज्वलित थे, जो सुपक्व-फलों से प्रपूरित था तथा जो कर्पूर की सुगन्धि से महक रहा था।१६ ॥

जहाँ विकसित पुष्प-समूह बिखर रहे थे, अगर एवं धूप की सुगन्धि विस्तृत थी, जो सुन्दर रूप से अलंकृत था और पाँच प्रकार की सुगन्धियाँ जहाँ व्याप्त थीं।१७॥

5252

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

[३८] पुव्वाणुभूय=पूर्वकाल में अनुभूत। रयकेलि=रति-क्रीडा। सुमरणसंजाय=स्मरण करने से उत्पन्न। कुसुमसर=कामदेव के बाण। वियार=विकार। पसर=प्रसार। पिययम-पास=प्रियतम के पास। पसुत्त=सोती हुई। भइणी=बहिन को। निरूवण=देखकर। ईसावसविवसा=ईर्ष्यावश विवश। सवक्कि=सौतेली। पक्खेव=गिरा देना। संभरण=स्मरण से। उब्भूय=उद्भूत (उत्पन्न)। वयण=मुख। संभवं=उत्पन्न। तप्पमोयरसभरा=प्रमोद रूपी रस से प्रपूरित। धाइ=धात्री। सगासं=पास में। रमावेऊण=मनोरंजन कर। चउद्दिसंपि=चारों दिशाओं में। नियारामफुल्लफलपगरं=अपने बगीचे के उत्तम फूल-फल समूह की। खिवेऊण=वर्षा करके।

उस भवन को देखकर पूर्वकाल में अनुभूत रतिकेलि के स्मरण से कामदेव के बाण को प्रसारित करने वाले विचार के उत्पन्न होने पर भी, प्रियतम के पास सोती हुई अपनी (सौतेली) बहिन को देख कर, अत्यन्त ईर्ष्यावश सौतेली माता के द्वारा निर्मित कुँए में गिरा दिए जाने की दुर्घटना के स्मरण से अत्यन्त क्रोधित तथा अपने तनय के मुख-दर्शन से उत्पन्न प्रमोद के रस से प्रपूरित वह (आरामशोभा) क्षण भर तक स्थिर रहकर सैकड़ों धायों के मध्य में सोते हुए उस पुत्र के पास जा पहुँची। अपने सुकोमल हाथों से उसे उठाकर क्षणभर तक उसे खिलाकर चारों दिशाओं में अपने बगीचे के फूलों एवं फलों की वर्षा कर वह अपने निवासस्थान (कुँए) में वापस आ गई।

[३९] पभायसमए=प्रभात समय में। पूइओ=पूजा की। सुच्चा=सुनकर। कूडआरामसोहा=कृत्रिम आरामशोभा। समाणीयं=मँगवाया है। संपयं=इस समय। वासरे=दिन में। संक्किज्जइ=संभव। विलक्खवयणं=विरूप मुख को। अवस्स-मेस=यह अवश्य ही। तिन्नि दिणा=तीन दिन। अज्जवस्सं=आज अवश्य ही। अच्चंतं=अत्यन्त (सर्वथा)। विलक्ख-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वयणा=कान्तिहीन मुख। दंभो=दम्भ। कइदिणे=कितने दिन। छज्जइ=छिपा रहेगा।

प्रातःकाल होते ही धायों ने राजा से विनती की—"स्वामिन्, आज ऐसा दिखता है कि फूलों एवं फलों से किसी ने कुमार की पूजा की है।" यह सुनकर राजा भी उसके पास आया और उसे देखकर उस कृत्रिम आरामशोभा से (उसका कारण) पूछा। उसने उत्तर में कहा—"मैंने अपने बगीचे का स्मरण कर उससे इन फूलों एवं फलों को यहाँ मंगवाया है।" तब राजा ने कहा—"इस समय भी उसे (बगीचे को) यहाँ क्यों नहीं बुला लेतीं?" उसने उत्तर में निवेदन किया—"उसे दिन में बुलाना सम्भव नहीं।" तब उसके विरूप मुख को देखकर राजा मन में सोचने लगा—"इसमें अवश्य ही कोई प्रपंच है।" इसी प्रकार तीन दिन व्यतीत हो गये। तब राजा ने रानी से कहा—"आज अवश्य ही उस बगीचे को ले आओ।" यह सुनकर उसका मुख सर्वथा कान्तिहीन हो गया। दम्भ कितने तक छिपा रहेगा?

[४०] चउत्थजामिणीए=चौथी रात्रि में। नियत्ता=वापिस जाने लगी। भूवइणा=राजा ने। करयलेण साहिय=हाथ से पकड़कर। साह्रिया=कहा, पूछा। पाणपिए=प्राणप्रिये। प्रियं जणं=प्रियजन को। पणयपरं=परम प्रणय को। विप्पयारेसि=ठग रही हो। पाणेसर=प्राणेश्वर। परमत्थि=किन्तु है। वागरेसु=कहो। मिल्हिस्सं=छोडूंगा। मुंचसु=छोड़ दीजिए। मं=मुझे। कल्ले=कल। अवस्सं=अवश्य ही। कहिस्सं=कह दूँगी। करयलचडियं=हाथ में आए हुए। चिंतारयणं=चिन्तामणि रत्न। हविस्सइ=होगा। पच्छातावो=पश्चात्ताप। पुहवीसरो=पृथिवीश्वर। मूलाओ=प्रारम्भ से। दुंव्विलसियं=कुकृत्य (दुर्विलसित)। अरुणुग्गमो=सूर्योदय हो गया।

चौथी रात्रि में (वास्तविक) आरामशोभा पूर्ववत् ही सभी कृत्य करके जब वापस जाने लगी तभी राजा ने उसका हाथ पकड़कर कहा—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"हाय, प्राणप्रिये, प्रियजन के परम प्रणय को इस प्रकार क्यों ठग रही हो ?" यह सुनकर उसने कहा—"प्राणेश्वर, ठग नहीं रही हूँ, किन्तु इसमें कुछ विशेष कारण है।" राजा ने कहा—"कहो क्या कारण है ? अन्यथा मैं छोड़ूँगा नहीं।" उसने भी विनयपूर्वक निवेदन किया—"नाथ, अभी तो मुझे छोड़ दीजिए, किन्तु कल इसका कारण अवश्य-अवश्य ही बता दूँगी।" तब राजा ने कहा—"क्या (इतना) मूर्ख हूँ कि हाथ में आये हुए चिन्तामणि रत्न को छोड़ दूँ ?" (यह सुन) उसने भी कहा—"ऐसा करने से तुम्हें पश्चाताप ही होगा।" इतने पर भी राजा ने उसे छोड़ा नहीं। तब उसने प्रारम्भ से अपनी सौतेली माता के सभी कुकृत्यों को कह सुनाया। इसी में सूर्योदय हो गया।

[४१] केसकलावं=केश-पाश। विलुलियं=विलुलित, लुण्ठित। संठवमाणीए=आश्वस्त रखने वाला। मओ=मृत। विसायपिसायगहिउव्व=विषाद रूपी पिशाच से ग्रस्त होकर। झत्ति=तत्काल। मुच्छा=मूर्च्छित। निमीलियच्छी=नेत्र निमीलित करके। छिन्नसाहव्व=टूटी हुई शाखा के समान। महिवीढे=जमीन पर। सीयलोवयारेहिं=शीतलोपचार से। पत्तचेयणा=चेतना प्राप्त होकर। विसायसायरे=विषाद रूपी समुद्र में। पक्खिवसि=डाल रही हो। संनिज्झ=सान्निध्य। कुणमाणो=करते हुए। ताउव्व=पिता के समान। मज्झाएसं=मेरे आदेश से। विणा=बिना। अरुणोदयं=सूर्योदय। अन्नत्थ=अन्यत्र। चिट्ठिहिसि=रहोगी। भविस्सइ=होगा। अविसज्जियाए=नहीं जाने देने के कारण ही। महंवि=मैंने भी। संपय=इसी समय। तं=उस घटना को। वुत्तं=कह दिया है।

उसी समय उसके केशपाश में रहकर (निरन्तर) आश्वस्त रखने वाला वह सर्प उपमर्दित होकर भूमि पर गिर पड़ा। उसे देखकर वह बाला विषादरूपी पिशाच से ग्रस्त होकर तत्काल ही मूर्च्छित हो नेत्र निमीलित कर टूटी हुई शाखा के समान जमीन पर गिर पड़ी। शीत-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लोपचार से जब उसकी मूर्च्छा टूटी तभी राजा ने उससे कहा—"प्राणेश्वरी, किस कारण से तुमने अपने को विषादरूपी समुद्र में डाल दिया है ?" तब उसने कहा—"स्वामिन्, पिता के समान हितकारी यह नागकुमार देव, जो कि निरन्तर मेरे पास रहता रहा, उसने मुझसे कहा था—"मेरे आदेश के बिना सूर्योदय पर्यन्त यदि तुम अन्यत्र रहोगी, तो उसी क्षण से तुम्हें मेरा दर्शन न हो सकेगा। वेणी से मृतसर्प गिरेगा। अतः हे नाथ, आपने मुझे जो नहीं जाने दिया, उसी कारण ऐसा हो गया है।" उसके बाद से (वरदान-विहीन होकर) वह वहीं रहने लगी।

[४२] गोसे=प्रातःकाल में। निविडबंधणेहिं=खूब कसकर, बाँधकर। कसाहिं=कोड़ों से। सहावसरलाए= स्वभाव से सरल।

उवरि=ऊपर। हियदइयं=हे हृदयेश्वर। पुव्वं=पूर्ववत्। पिक्खेसु=देखें ॥१८॥

जइविहु=यद्यपि। दुट्ठचित्ताए=दुष्टचित्ता। ठावणयं=घर में रखना। जुत्तं=उचित। वयणं=कथन। तुह=तुम्हारा। तहवि=तथापि। दुल्लंघं=दुर्लंघ्य ॥१९॥

मोयाविया=छुड़वा दिया। नियपासे=अपने पास में। ठाविया=रखवा लिया। भइणिं=बहिन को। परिपिच्छह=देखो। पच्चक्खं=प्रत्यक्ष में। सज्जणदुज्जणाण=सज्जनों एवं दुर्जनों की। विसेसं=विशेषता को ॥२०॥

प्रातः काल होते ही उसकी बहिन को बिना किसी दया के रस्से से खूब बाँधकर जब राजा ने कोड़े से पीटना प्रारम्भ किया, तभी स्वभाव से सरल आरामशोभा के चरणों में गिरकर वह उससे अपने को बचा लेने की प्रार्थना करने लगी। आरामशोभा ने भी राजा से निवेदन करते हुए कहा—

"हे स्वामिन्, यदि आप मेरे ऊपर कृपा कर सकें, तो मेरी इस बहिन को छोड़ दें। हे हृदयेश्वर, दया करके उसे पूर्ववत् ही समझें और प्रेम करें। ॥१८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राजा ने भी उत्तर में कहा—"हे देवि, बात ऐसी ही है। यद्यपि इस दुष्ट-चित्ता के लिए जीवित छोड़ना उचित नहीं, तथापि तुम्हारा वचन भी दुर्लंघ्य है।" ॥१९॥

राजा ने उसे (कृत्रिम आरामशोभा को) छोड़ दिया एवं आरामशोभा को अपने समीप में ही रख लिया। (इस उदाहरण के माध्यम से) सज्जनों एवं दुर्जनों की विशेषता को प्रत्यक्ष ही देख लो। ॥२०॥

[४३] पलयानलं=प्रचण्ड अग्नि। पज्जलंत=प्रज्वलित। नियपुरिसा=अपने आदमियों को। हक्कारिऊण=बुलाकर। समाइट्ठा=आदेश दिया। दुवालस=बारह। कण्णणासऊडे=कर्ण एवं नासापुट। छिंदऊण=छेदकर। निव्वासेह=निर्वासित करो। वज्जग्गिफुल्लिगउग्गं=वज्राग्नि के स्फुलिंग के समान उग्र। भत्तुणो=पति के। निवडिऊण=गिरकर।

जइ=यदि। कहवि=कभी, किसी प्रकार। डसइ=डँस ले। भसणो=कुत्ता। कोवि=कोई भी। खाइ=खा लेता है। सुयणो=सज्जन। इय मुणिय=यह समझकर। पणयं=प्रणय, कृपा ॥२१॥

तब प्रचण्ड अग्नि की तरह प्रज्वलित उस राजा ने अपने आदमियों को बुलाकर आदेश दिया—"उस अग्निशर्मा ब्राह्मण से बारहों ग्रामों को छीनकर, अग्निशर्मा एवं उसकी पत्नी के कान एवं नाक छेदकर, उन्हें मेरे देश से निर्वासित कर दो।" वज्राग्नि के स्फुलिंग के समान उग्र राजा के इन वचनों को सुनकर आरामशोभा ने पति के चरणों में गिरकर प्रार्थना की—

"जिस प्रकार कुत्ता किसी सज्जन पुरुष को काट लेता है, तो क्या वह (सज्जन) भी उसे काट लेता है? यह समझकर ही हे नाथ, मेरे पिता को भी सजा से मुक्त कर मेरे ऊपर कृपा कीजिए ॥२१॥"

[४४] तच्चित्तखेयपणोयणत्थं=उस आरामशोभा के चित्त

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

के विषाद को दूर करने के लिए। विसयसुहमणुहवंताणं=विषय-सुख का अनुभव करते हुए उन दोनों का। सुहंसुहेण=अत्यन्त सुखपूर्वक। वच्चइ=व्यतीत होने लगा।

इस प्रकार देवी के आग्रह से राजा ने उसके चित्त के विषाद को दूर करने के लिए ही उसके पिता को बारह ग्राम पूर्ववत् ही वापिस दे दिये और उसके बाद वे दोनों राजा-रानी विषय-सुखों का अनुभव करते हुए सुखपूर्वक समय व्यतीत करने लगे।

[४५] परुप्परं=परस्पर में। धम्मवियारं=धर्मविचार। कुणंताणं=करते हुए। कम्मस्स=कर्म का। परिणामो=फल। एयमत्थं=इसलिए। पुच्छामि=पूछना चाहती हूँ।

किसी एक समय परस्पर में धर्म-विचार करते हुए आरामशोभा ने इस प्रकार का वार्त्तालाप किया—"प्रियतम, पूर्वकाल में मैं दुखी होकर बाद में सुख-भागिनी बनी थी। इससे मुझे ऐसा प्रतिभासित होता है कि यह किसी पूर्व कर्म का ही फल है। इसीलिए यदि कोई ज्ञानी मिले, तो मैं उससे इसका कारण पूछना चाहती हूँ।"

[४६] उज्जाणपालओ=उद्यानपाल ने। आगंतूण=आकर। नंदणुज्जाणे=नन्दन-वन में। करकलिय=हाथ में रखे हुए। मुत्ताहलमिव=मुक्ताफल के समान। सयलभावे=समस्त पदार्थों को। वियाणमाणो=जानने वाले। पंचसय=पाँच सौ। साहुपरियरिओ=साधुओं के साथ। सिरीवीरचंदसूरी=श्री वीरचन्द सूरि। समोसरिओ=पधारे हैं। हरिसभरुब्भिन्नरोमंचो=हर्ष के वश से रोमाञ्चित होकर। पीइदाणं=प्रीतिदान को। विसज्जेइ=विसर्जित किया। अज्जेवागओ=आज ही आगमन हो गया। तिपयाहिणा=तीन प्रदक्षिणाएँ। मुणिंदं=मुनिराज को। जहोच्चियट्ठाणे=यथोचित स्थान पर। भगवया=भगवान ने। पारद्धा=प्रारम्भ किया। देसणा=उपदेश।

अणोरपारे=समुद्र के समान अपार, असीमित। भमंतो वि=

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भ्रमण करता हुआ भी। सया=सदा। पावाओ=पापों के। दुक्खरिंछोलि=दुःखों से मुक्ति। लहंते=प्राप्त कर सकते हैं ॥२२॥

इस प्रकार के वार्त्तालाप के समय ही उद्यानपाल ने आकर प्रणाम किया और राजा से निवेदन किया—"देव, हाथ पर रखे हुए मुक्ताफल के समान ही समस्त पदार्थों को एक साथ जानने वाले श्री वीरचन्द सूरि अपने पाँच सौ साधुओं के साथ नन्दनवन-उद्यान में पधारे हैं।" यह सुनकर हर्ष वशात् रोमाञ्चित होकर राजा ने उस उद्यानपाल के लिए प्रीतिदान देकर विसर्जित किया। उसके बाद राजा ने कहा—"प्रिये, उठो, तुम्हारा मनोरथ पूर्ण हो गया क्योंकि (इच्छित) महात्मा का आगमन आज ही हो गया। राजा अपनी आरामशोभा सहित समस्त लोगों से आवृत्त होकर उद्यान में गया और तीन प्रदक्षिणाएँ देकर मुनिराज को प्रणाम करके यथोचित स्थान पर बैठ गया। भगवान् ने अपना उपदेश इस प्रकार प्रारम्भ किया—

"पाप रूपी दुखों से सन्तप्त प्राणी इस अपार-संसार में निरन्तर भटकते हुए धर्म से ही सुख प्राप्त कर सकते हैं।" ॥२२॥

[४७] धम्मदेसणावसाणे=धर्मोपदेश के पश्चात्। जोडिय-करसंपुडा=दोनों हाथ जोड़कर। भयवं=भगवन्। सजलजल-हरगंभीर=सजल मेघ के समान गम्भीर। सरेण=स्वर से। वागरिउमाढत्तो=कहना प्रारम्भ किया।

धर्मोपदेश के पश्चात् दोनों हाथ जोड़कर आरामशोभा ने गुरु से निवेदन किया—"भगवन्, आपने जिस प्रकार कहा है, वह वस्तुतः वैसा ही है। किन्तु पूर्वभव में मैंने क्या किया था? अतः कृपाकर वही मुझे बताइये।" तब सूरि ने भी सजल-मेघ के समान गम्भीर-स्वर से कहना प्रारम्भ किया—

[४८] जंबूद्दीवे=जम्बूद्वीप में। भारहे वासे=भारतवर्ष में। चंपाए=चम्पा नाम की। नयरीए=नगरी है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सयललोय=समस्त लोकों में। धणउव्व=कुबेर के समान। समिद्धो=समृद्ध। कुलंधर नामा=कुलंधर नाम का। सिट्ठी=सेठ। कुलाणंदा=कुलानन्दा नाम की। रूवलडहलायण्ण=रूप सौन्दर्य एवं लावण्य से व्याप्त। कमलसिरी=कमलश्री। कमलवई=कमलवती। कमला=कमला। जसएवी=यशदेवी। पियकारिणी=प्रियकारिणी। धणवंतकुलेसु=धनी एवं कुलीन घरानों में। दिव्ववसा=दैववशात्। अट्ठमिया=आठवीं पुत्री।

इसी जम्बूदीप नामक द्वीप वाले भारतवर्ष में चम्पा नाम की नगरी है। वहाँ सभी लोकों में प्रसिद्ध कुबेर के समान समृद्ध कुलन्धर नामक एक सेठ निवास करता था। उसकी कुलानन्दा नामकी पत्नी थी। उसके साथ विषय-सुख का अनुभव करते हुए क्रम से अत्यन्त सौन्दर्य एवं लावण्य से युक्त सात पुत्रियाँ उत्पन्न हुईं—कमलश्री, कमलवती, कमला, लक्ष्मी, श्री, यशदेवी एवं प्रियकारिणी। धनी एव कुलीन घरानों में वे विवाहित हो गईं और भोगों को भोगती हुईं सुखपूर्वक रहने लगीं। दैववशात् उनके एक आठवीं कन्या का भी जन्म हो गया।

[४६] नामं=नामकरण। कुणंति=किया। वड्ढंती=बढ़ती हुई। जुव्वणमणुपत्ता=युवावस्था को प्राप्त हो गई। पिक्खंताणं=देखते हुए। परियणेण=परिजनों के द्वारा। अणायरेण=अनादरपूर्वक। निब्भग्ग=निर्भाग्या। अम्मापिऊणं=माता-पिता को। अईव=अतीव। उव्वेओ=उद्वेग। बुड्ढकुमारिम=वृद्ध कुमारी का। गरुयं अववायं=भारी अपवाद (निन्दा) को। पामिहिसि=प्राप्त होओगे। खेयं उव्वहंतो=भारी दुखी होता हुआ।

उस समय (उसे देख) माता-पिता अत्यन्त दुखी हो उठे। उन्होंने उसका नामकरण भी नहीं किया। वह भी अनादरपूर्वक वृद्धिगत होती हुई युवावस्था को प्राप्त हुई। लोक में उसका नाम 'निर्भाग्या' प्रसिद्ध हो गया। उसे देखकर माता-पिता अत्यन्त उद्वेग से भर उठते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक दिन एक परिजन ने उस सेठ से कहा—"इस वृद्धा कुमारी का विवाह न करने के कारण लोक में तुम भारी निन्दा को प्राप्त होओगे।" इस प्रकार कहे जाने पर भी मन में भारी दुखी होता हुआ वह दुख-पूर्वक समय बिताने लगा।

[५०] हंट्टमि=दुकान पर। मलमइलगत्तो=मैल से मलिन गात्र। दीहमग्गुल्लंघण=लम्बे मार्ग की पैदल-यात्रा करने के कारण। परिस्संतो=परिश्रान्त। पहिओ=पथिक। दिट्ठीगोयरं=दृष्टिगोचर। जाई=जाति। किम-अत्थ आगओसि=किस प्रयोजन से आए हो? संलत्तं=कहा। सागरतीरमंडणाओ=सागरतीर-मण्डल के। चउडदेसाओ=चोड देश से। कोसलदेस मंडणाए=कोशलदेश मण्डल के। कोसलाए=कोशल के। समागओ=आया हूँ। नंदसिट्ठिणो=नन्द नामक सेठ की। सोमाए=सोमा नाम की। भारियाए=पत्नी की। कुच्छि-समुब्भूओ=कुक्षि से उत्पन्न। नंदणाभिहाणो=नन्दन नाम का। तणओ=पुत्र। खीण=क्षीण। विहवो=वैभव। अत्थोवज्जणत्थं=अर्थोपार्जन-हेतु। चोडदेसं=चौडदेश। अणुवज्जियदविणो=द्रव्योपार्जन किए बिना। दालिद्दोवद्दुओ=दरिद्रता से विवश होकर। अभिमाणनडिओ=अहंकारवश। सदेसं=स्वदेश को। परघरेसु=दूसरे के घर में। कज्जाइं=कार्यादि को। उअर-भरणं=उदर-पोषण। वसंतदेवेण=वसन्तदेव ने। लेहं=लेख (पत्र)। तप्पिउणो=उसके पिता को। सिरिदत्तसिट्ठिणो=श्रीदत्तसेठ को।

एक बार वह सेठ अपनी दूकान पर बैठा था कि मलिनगात्र, लम्बे मार्ग की पैदल-यात्रा करने के कारण परिश्रान्त एक पथिक उसे दृष्टि-गोचर हुआ। सेठ ने उससे पूछा—"कहाँ से आ रहे हो? तुम कौन हो और कहाँ जा रहे हो? तुम्हारा क्या नाम है और यहाँ किस प्रयोजन से आये हो?" यह सुनकर उसने उत्तर में कहा—"मैं सागरतीर-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मण्डल के चोड देश से आया हूँ और कोशल देश-मण्डल के कोशल के निवासी नन्दसेठ की सोमानामक पत्नी की कुक्षि से उत्पन्न नन्दन नामका पुत्र हूँ। क्रम से क्षीण-वैभव होने के कारण अर्थोपार्जन के हेतु मैं चोड़-देश गया था। वहाँ भी द्रव्योपार्जन किये विना ही दरिद्रता से विवश होकर एवं अहंकार-वश स्वदेश नहीं गया। वहीं पर दूसरे के घर में कार्य करता हुआ उदर-पोषण करने लगा और इधर, उसी चोडदेश के निवासी वसन्तदेव ने किसी कार्यवश अपना पत्र देकर मुझे यहाँ पर स्थित अपने भवन में भेजा है। कृपाकर मुझे आप उसका वह घर दिखा दें, जिससे मैं उसके पिता श्रीदत्त सेठ को उसका पत्र दे सकूँ।"

[५१] महदुहियाए=मेरी पुत्री के लिए। वरो=वर, पति। जुग्गो=योग्य। निब्भगाए=अभागी के लिए। निब्भग्गसेहरो=भग्नशेखर, अत्यन्त अभागा। केवि=कोई भी। इत्थ=यहाँ। एही=आएगा, लौटेगा। पलोइज्जइ=दिखाई पड़ता है। परदेसिओ=परदेशी। परिणिऊण=विवाह करके। अहंकार-नडिउव्व=अहंकार से व्याकुल। ससुरघरसमीवे=ससुर के घर के समीप। कइया=कभी। मह=मेरे। आगच्छ=आओ। परमो=उत्कृष्ट। पढमं=सबसे पहले। पच्छा=बाद में। आगमिस्सं=आऊँगा। मित्तो=मित्र। कज्जेणाहमागओ=मैं जिस कार्य से आया हूँ। सिक्खविय=सिखा-पढ़ाकर। समं=साथ। आणे-यव्वो=ले आना।

तब कुलन्धर ने भी अपने मन में विचार किया—"मेरी निर्भाग्या पुत्री के लिए यह कोई अभागा एवं परदेशी व्यक्ति योग्य वर सिद्ध हो सकता है। इसके साथ उसका विवाह करके यह पुनः यहाँ न लौटेगा जैसा कि यह अहंकार से व्याकुल जैसा दिखाई देता है। क्योंकि ऐसा व्यक्ति कभी भी ससुर के घर के समीप नहीं ठहरेगा।" अतः वह उससे बोला—"वत्स, मेरे घर चलो। क्योंकि उस (वसन्तदेव) का पिता मेरा परममित्र है।" उसने भी उत्तर में कहा—"तात, जिस कार्य से मैं यहाँ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आया हूँ, सर्वप्रथम उसे ही पूर्ण करके बाद में तुम्हारे घर आऊँगा।" तब सेठ ने अपने पुरुष को इस प्रकार सिखा-पढ़ाकर उसके साथ भेज दिया— "भद्र, जब यह व्यक्ति अपना पत्र (श्रीदत्त सेठ को) दे दे, तभी उसे मेरे पास वापस ले आना।"

[५२] सव्वसंदेसपुव्वं=सभी सन्देशों से युक्त। वाइओ=पढ़ा। जणयमित्तो=पिता का मित्र। कुलंधरसिट्ठी=कुलंधर सेठ। आहवणत्थं=आह्वान के लिए; बुलाने के लिए। मिलिऊण =मिलकर। परिवसइ=निवास करता है।

वह व्यक्ति उसके साथ श्रीदत्त सेठ के घर गया। उसे प्रणाम करके सभी सन्देशों से युक्त वह पत्र उसे समर्पित कर दिया। उसने भी वह पत्र पढ़ा। तभी उस नन्दन ने श्रीदत्त से कहा—"हमारे पिता के मित्र कुलन्धर-सेठ यहाँ निवास करते हैं। उन्होंने मुझे अपने यहाँ बुलाने हेतु इस व्यक्ति को मेरे पास भेजा है। अतः उससे मिलकर मैं पुनः तुम्हारे पास लौट आऊँगा।

[५३] पुरिसेण=पुरुष के द्वारा। ण्हाविय=नहवाकर। अहिणववत्थाणि=अभिनव वस्त्र। नियंसाविय=पहनाकर। विसिट्ठभोयणं=विशिष्ट भोजन को। भुंजाविय=कराकर। तंबोलं=ताम्बूल। अज्जवि=आज ही। धूयं=पुत्री को। पेसिस्सं=भेजूंगा। नीविं दाऊण=द्रव्य-सम्पत्ति के साथ विदाई करके। पडिवन्नतव्वयणो=उसकी बात स्वीकार कर ली।

तब उस पुरुष के साथ वह पुनः सेठ के घर वापिस लौटा। उसके पश्चात् सेठ ने उसे नहवाकर अभिनव-वस्त्र पहिनाकर विशिष्ट भोजन कराकर तथा ताम्बूलादि देकर उससे कहा—"वत्स, मेरी पुत्री के साथ परिणय कर लो।" उसने उत्तर में कहा—"मुझे आज ही चोड देश पहुँचना है।" कुलन्धर ने कहा—"इस कन्या के साथ परिणय करके द्रव्य-सम्पत्ति देकर तुम्हारे साथ ही मैं इसे भेज दूँगा।" तब नन्दन ने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उसकी बात स्वीकार कर उसकी निर्भाग्या नामक कन्या के साथ विवाह कर लिया।

[५४] इत्थ=यहाँ। चिट्ठसि=ठहरते हो। अवरं जणं=दूसरे व्यक्ति को। पट्ठविस्सं=भिजवाना पड़ेगा। गरुयं=महत्वपूर्ण। ससुरमापुच्छिय=ससुर से पूछकर। चउडविसयं=चोडदेश। मणोरहोचियं=मनोरथोचित। वच्चेसु=जाओ। जुग्गयं=योग्य। भंडयं=भोजन सामग्री आदि।

विवाहोपरान्त श्रीदत्त ने उनसे कहा—"यदि तुम यहाँ रुकोगे तब किसी दूसरे व्यक्ति को पत्र देकर वहाँ (वसन्तदेव के पास) भिजवाना पड़ेगा। क्योंकि वहाँ हमें आवश्यक कार्य है।" नन्दन ने भी उत्तर में कहा—"ससुर से पुछकर ही वहाँ वापिस जाऊँगा।" उसने जाकर ससुर से पूछा—"तात, श्रीदत्त को अत्यावश्यक काम है, उसी कारण वह मुझे चोड देश भेज रहा है।" सेठ ने भी विचार किया—"यह तो मेरे मनोरथोचित ही कह रहा है।" अतः सेठ ने कहा—"वत्स, तुम अपनी पत्नी के साथ चले जाओ। तुम्हारे योग्य भोजन-वस्त्रादि सामग्री उसी स्थान पर भिजवा दूँगा।"

[५५] कहणिज्जं=कहने योग्य। घित्तूण=लेकर। संबल-मित्तसहाओ=मित्र का सहारा लेकर। इक्कल्लओ=अकेला ही। उज्जेणिं=उज्जयिनी नगरी। लहुपयाणएहिं=अल्प प्रयाण करने से। बहुभक्खयं=अधिक खाने के कारण। संबलं=नाश्ता। मग्गपारो=मार्ग को पार करना। वंछियदेसं=वाञ्छित देश को। ता=इसलिए। सुत्तं मुत्तूण=सोता हुआ छोड़कर। वच्चामि=चला जाऊँ।

उसने जाकर श्रीदत्त के लिए यह वृतान्त कह सुनाया—"मेरे आगे कथनीय कहो।" उसने भी उसके लिए पत्र लिखकर दे दिया और सन्देश भी निवेदित कर दिया। तब वह अपनी नव-परिणीता को लेकर, एवं उसे ही मित्र का सहारा समझकर अकेला ही चल दिया और क्रम से

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उज्जयिनी नगरी पहुँचा। वहाँ पहुँचने के बाद वह विचार करने लगा—"अल्प प्रयाण करने से, नाश्ता ज्यादा लेने से अथवा पत्नी के साथ रहने से मार्ग पार नहीं किया जा सकता। इसलिए इसे यदि सोता हुआ ही छोड़कर चल दूँ, तब यथाशीघ्र ही वाञ्छित देश को पहुँच सकूँगा।"

[५६] पक्खीणं=समाप्ति। भिक्खाभमणेण=भिक्षा के लिए भ्रमण। भमिहिसि=घूमोगी। नवत्ति=अथवा नहीं। पिट्ठिलग्गाए=पीछे-पीछे लगकर। महूसवसारिसी=महोत्सव के सदृश। परुप्परं=परस्पर में। मंतयंता=विचार करते हुए। सुत्ता=सो गए। अणाह=अनाथ। पहियसालाए=पथिकशाला में। दोवि=दोनों। गहिय=लेकर। उट्ठिय=उठकर। लज्जंतो=लज्जित होने के कारण। संबलपुट्टलयं=नाश्ते की पोटली। सणियं सणियं=धीरे-धीरे। अवरमग्गेण=दूसरे मार्ग से। पलाणो=भाग गया।

नन्दन उज्जयिनी में निर्भाग्या को छोड़कर भाग जाना चाहता था। अतः उसने अपनी पत्नी से कहा—"प्रिये, नाश्ता की समाप्ति होने पर क्या किया जायेगा? यदि घूम-घूमकर भिक्षा माँग कर उदर-पूर्ति करनी पड़े, तब तुम्हें भी मेरे साथ घूम-घूमकर सिर झुकाकर भिक्षा-वृत्ति करनी पड़ेगी। क्या यह उचित होगा?" ऐसा कहे जाने पर पत्नी ने कहा—"तुम्हारे पीछे-पीछे चलकर भिक्षा माँगना भी मुझे महोत्सव के सदृश होगा।" इस प्रकार परस्पर में विचार-विमर्श करते हुए नगरी के बाहर अनाथों की पथिकशाला में वे दोनों सो गए। इसके बाद भिक्षा-वृत्ति के लिए लज्जित होने के कारण पत्नी को वहीं सोती हुई छोड़कर नाश्ता की थैली लेकर धीरे-धीरे वह उठा, और दूसरे मार्ग से भाग गया।

[५७] संजाए=होने पर। पियं अपिक्खंति=प्रियतम को न देखकर। इओ-तओ=इधर-उधर दइओ=पति। तरल-तरले=तरलदृष्टि। खिवंती=क्षेप करती हुई। हाहारवमुहर-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुही=मुख से तीव्र हाहाकार शब्द करती हुई। अंसुपवाहण्ह-विय=अश्रुप्रवाह से स्नान कराती हुई। थणकलसजुयला=अपने स्तन-कलशों को। उत्तट्ठहरिणिव्व=आक्रान्त हरिणी के समान। दीणवयणा=दीनमुख से। पलविउं लग्गा=प्रलाप करने लगी।

एगागिणिं=एकाकिनी। अणाहं=अनाथ। अबलं=अबला को। लंघेऊणं=उल्लंघन करके। चइय=छोड़कर। दइय=हे पति। कत्थ=कहाँ। नियकुलमज्जायं=अपने कुल की मर्यादा को। संपइ=इस समय ॥२३॥

निल्लज्जसेहर=निर्लज्जों के सरदार। तरुणि=तरुणियों के। निक्करुण=निष्करुण, निर्दय। लहुडलायण्णं=सौन्दर्य और लावण्य। निब्भरपिम्मं=प्रेम पर ही आश्रित रहने वाली। दइयं=प्रिया को। दंसेसि=दिखाओगे ॥२४॥

नवजुव्वण=नवयौवन को। ललियंगि=ललितांगी को। बलेणावि=बलात्कार पूर्वक। छिवइ=स्पर्श कर ले। वयणिज्ज-मणिज्ज=कामदेव के समान सुन्दर ॥२५॥

तत्पश्चात् प्रातःकाल होते ही जब पत्नी ने अपने पति को वहाँ न देखा, तब इधर-उधर अपना तरल दृष्टिक्षेप करती, नाश्ते की थैली को भी न देखकर विचार करने लगी—"निश्चय ही मेरा प्रियतम मुझे छोड़कर भाग गया है। अतः वह अपने मुख से तीव्र हाहाकर शब्द करती हुई अश्रुप्रवाह से अपने स्तन-कलशों को स्नान कराती हुई, आक्रान्त-हरिणी के समान दीनमुख से इस प्रकार प्रलाप करने लगी—

"अब मैं एकाकिनी अनाथ हो गई हूँ। मेरे पति ने मुझे छोड़कर अबला बना दिया है। हे नाथ, तुम कहाँ हो, अपने कुल की मर्यादा का उल्लंघन कर इस समय कहाँ चले गये हो? ॥ २३ ॥

"हाय-हाय, हे निर्लज्ज सरदार, तरुणियों के प्रति निष्करुण, तुम्हारे प्रेम पर ही आश्रित रहने वाली, सौन्दर्य एवं लावण्य से परिपूर्ण अपनी प्रिया को त्यागकर अब तुम किसके लिए अपना मुँह दिखाओगे?" ॥२४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"कामदेव के समान हे अवर्णनीय, मुझ नवयौवना, ललितांगी का यदि कोई बलात्कारपूर्वक स्पर्श भी कर ले, तब क्या तुम्हारे कुल की निन्दा न होगी ?" ॥ २५ ॥

[५८] छुट्टिज्जए=छुड़ाया जा सकेगा। परिदेविएण= पीड़ित होकर। जीवियाओवि=जीवन से भी। अब्भहियं= अत्यधिक। सीलं=शील-धर्म की। उवायं=उपाय। पिउहरं= पितृगृह को। गउरवं=गौरव, स्वाभिमान। वणियं=व्यापारी। सुदिढ=सुदृढ़। दुस्सीलेहिंतो=दुष्ट चरित्र वालों से। धम्म-धणियं=धर्म के धनी। जणयं काऊण=पिता बनाकर। समंतओ=चारों ओर। निरवज्जाणि=निर्दोष। अत्तणो= अपना। धीरत्तमवलंबिय=धैर्य धारण करके। महापुरिसं= महापुरुष को। निवडिऊण=गिरकर। सकरुणसरं=सकरुणस्वर से। सच्छंदा=स्वच्छन्द। इत्थी=स्त्री। खिसिज्जइ=भ्रष्ट कर दी जाती है।

बालत्तणंमि=बालापन में। जुव्वणपत्ताइ=यौवन प्राप्त होने पर। बुड्ढत्तणेण=वृद्धा होने पर। सच्छंदत्तं=स्वच्छन्द रहना ॥२६॥

अथवा—"अब इस परिदेवन से क्या लाभ ? पूर्वकृतकर्म का फल छुटाया नहीं जा सकता, तो भी क्यों न कोई उपाय करूँ जिससे जीवन से भी अधिक मूल्यवान अपने शीलधर्म की सुदृढ़ हृदय होकर दुष्टचरित्र वालों से मैं सुरक्षा कर सकूँ। अतः अब अपने पितृघर ही चलूँ अथवा वहाँ जाने में भी मुझे गौरव प्राप्त न होगा। अतः यहीं प्रशंसनीय धर्म के धनी, किसी वणिक् को धर्मपिता मानकर उसके घर निर्दोष-कार्य करते हुए क्यों न अपना निर्वाह करूँ ?" इस प्रकार धैर्य धारण कर वह बाला उज्जयिनी नगरी में प्रविष्ट होकर चारों दिशाओं में उसे खोजती हुई भटकती रही। वहीं पर उसने एक वणिक् महापुरुष को देखा। उसके चरणों में गिरकर वह सकरुण स्वर से बोली—"तात, मुझ अनाथिनी के के लिए तुम्हारे ही चरणों की शरण है। क्योंकि स्वच्छन्द स्त्री निश्चय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ही दुष्टों के द्वारा शीलभृष्ट कर दी जाती है। कहा भी गया है—

बालपन में पिता, युवती होने पर पति और वृद्धा होने पर पुत्र उसकी रक्षा करता है। नारी कभी भी स्वच्छन्द नहीं रह सकती।" ॥२६॥

[५९] मणिभद्दसिट्ठिणा=मणिभद्र सेठ ने। कुलंधरवव-हारिणो=कुलंधर नाम के व्यापारी की। वल्लहेण=पति के। भट्ठा=भृष्ट (नष्ट, छूट गया)। तव्वयणामयसित्तुव्व=उसके मुख से अमृतसिक्त वचन। सत्थाइ=सार्थ आदि की। गवेसणं=खोज के लिए। वत्ता=कुशल-वृत्तान्त। पत्ता=आया। सत्थस्स=सार्थ का। वयणमवितहं=वचन प्रामाणिक हैं। वितहं=अप्रामाणिक। जाणणकए=जानने के लिए। सिक्खविय=सिखाए-पढ़ाए।

तब उस मणिभद्र सेठ ने उससे पूछा—"वत्से, तुम कौन हो ?" प्रत्युत्तर में वह बोली—"तात, चम्पानगरी के एक कुलन्धर नामक व्यापारी की पुत्री हूँ। पति के साथ चोड देश जाने के लिए प्रस्थान किया था, किन्तु उसका साथ छूट गया है। अतः मुझे यहाँ आना पड़ा है। यह अत्युत्तम होगा, यदि आप मेरे धर्म-पिता बन जाएँ।" उसके मुख से आनन्दित करने वाले उस अमृतसिक्त वचन को सुनकर वह बोला—"वत्से, मेरे घर चलो, पुत्री के समान मेरे घर में रहो। तुम्हारे परिवार की खोज के हेतु सार्थ आदि को भेजूंगा एवं निर्वाह की अन्य समस्त सामग्री तुझे प्रदान करूँगा।" उसने (उसके परिवार की खोज के लिए) अपने सेवकों को सभी दिशाओं में भेज दिया। किन्तु उन्हें उसके विषय में कोई गन्ध तक न मिली। अतः उसके (सेठ के) मन में संशय उत्पन्न हो गया कि "इस कन्या का वचन प्रामाणिक है अथवा अप्रामाणिक ?" यही जानने के लिए उसने चम्पानगरी में कुलंधर-सेठ के पास प्रशिक्षित (सिखाये-पढ़ाये) एक व्यक्ति को भेजा। उसने भी जाकर वहाँ कहा—

[६०] नियनियभत्तुणो=अपने-अपने पतियों के साथ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अट्ठमिया=आठवीं। सत्त=सात। संपयं=इस समय। संपत्थिया =गई है।

"सेठ, मुझे मणिभद्र सेठ ने तुम्हारे पास भेजा है। यदि तुम्हारी कोई कन्या हो, तो उसका विवाह-सम्बन्ध कर दीजिए।" तब कुलन्धर ने कहा—"मेरी सात पुत्रियों की शादी इसी नगर में हुई है, जो अपने-अपने पतियों के साथ रहती हुईं सुखपूर्वक रह रही हैं। पुनः आठवीं पुत्री की शादी अभी-अभी की है, जो अपने पति के साथ चोड़ देश गई है। अब और तो कोई कन्या है नहीं, जिसकी कि तुम लोगों के यहाँ सम्बन्ध-वार्त्ता चलाई जा सके।"

[६१] गउरवं=गौरव (आदर)। विणयाइणा=विनय आदि के द्वारा। सपरियणं=पजिननों सहित। तं अणुरंजइ= उनका मनोरंजन करती रहती है।

ज्ञातेयडम्बरः=जाति का आडम्बर। वानेयं=जंगली घास, सुगन्धित घास। पुष्प=फूल। अंगजः=शरीर से उत्पन्न। मलः=मल, मैल, पसीना॥२७॥

"कुलंधर सेठ का उत्तर सुनकर वह पुरुष अपने घर वापस हो गया और समस्त वृत्तान्त मणिभद्र से कहा। मणिभद्र भी उसका परिचय प्राप्त कर उसी दिन से उस कन्या का विशेष आदर करने लगा। वह कन्या भी प्रतिदिन विनयादि गुणों से परिजनों का मनोरंजन करती हुई वहाँ रहने लगी। कहा भी है—

"गुण ही गौरव के कारण बनते हैं, जाति, समृद्धि एवं सौन्दर्य के आडम्बर नहीं। मौथा नामक जंगली सुगन्धित घास से फूल तो प्राप्त होते हैं; किन्तु उसके शरीर से तो मल ही उत्पन्न होता है॥२७॥

[६२] उत्तुंगचंगं=विशालकाय एवं सुन्दर। काराविय= बनवाया। परमगुरु=परम गुरु के। चलणसुस्सूसणपउणी= चरणों की सुश्रूषा में तत्पर। लिंपणमंडणसंमज्जणाइ=लीपने-पोतने, धोने-सजाने आदि का। दविणजायं=द्रव्य-सम्पत्ति प्राप्त

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होती थी। भत्तुल्लयाइक्कए=भक्ति के आवेश में। रत्थाइयं=रथ आदि। बहुवहुयरं=अधिक-अधिकतर। वियरेइ=वितरण करने लगा। छत्तत्तयं=तीन छात्रों का। कारियं=निर्माण करवाया। केरिसं=कैसा।

माणिक्कचक्क=माणिक्य समूह से। जडिउज्जल=जड़े हुए उज्ज्वल। हेमदंडं=स्वर्ण-दण्ड से। मुत्ताहलावलिपहाणकयावचूलं =मुक्तावलीप्रधान कृत वन्दनवार। चीणंसुएण=चीनांशुक। पडिछन्नुवरिल्लदेसं=आच्छादित मण्डपप्रदेश वाला। चंचंत-कंतमणिकंतिविभासियासं=दैदीप्यमान सुन्दर मणियों की कान्ति से विभासित दिशाओं वाला ॥२८॥

इसके वाद मणिभद्र ने जिनमत से भावित हृदय होकर विशालकाय, उन्नत एवं सुन्दर एक जिनभवन वनवाया। वहाँ वह निरन्तर ही परम गुरु के चरणों की शुश्रूषा में तत्पर रहकर चैत्य में लीपने-पोतने तथा धोने-सजाने का कार्य करने लगी और उस मन्दिर के स्वामी उस सेठ से जो-जो सम्पति प्राप्त होती, उससे उसने जिनभवन में परिक्रमा-मार्ग वनवाकर रथ आदि वनवा दिए। उन कार्यों से सेठ विशेष रूप से सन्तुष्ट हुआ और उसने उसे अधिक-अधिकतर द्रव्य प्रदान करना प्रारम्भ किया। उसने भी उस द्रव्य से देव के लिए तीन छत्रों का निर्माण कराया। कैसे थे वे ?

"माणिक्य-समूह से जटित, उज्ज्वल स्वर्णदण्ड-युक्त, वहुमूल्य उत्तम मुक्ताफलों की वन्दनवारों से युक्त, जिसके ऊपर चीनांशुक आच्छादित था, और जिस (छत्रत्रय) की दैदीप्यमान कान्ति से सभी दिशाएँ विभासित थीं ॥२८॥

[६३] जिणोवरि=जिन-भगवान के ऊपर। चामरभिंगार =चामर-भृंगार (कलश)। वेयावच्चं=वैयावृत्य। चउव्विहा-हारवसणसयणासणाइणा=चतुर्विध आहार-वस्त्र-शयन-आसन आदि से। गुरुजणमाराहेइ=गुरुजनों की आराधना करने लगी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

साहम्मियवच्छल्लं=साधर्मी जनों से वात्सल्य भाव को। सुस्सूसणं=सुश्रुषा को। सम्पत्तसम्मत्ता=सम्यक्त्व को प्राप्त करके। कालमइक्कमइ=समय व्यतीत करने लगी।

उस छत्रत्रय को जिनभगवान के ऊपर स्थापित किया गया और अन्य चामर-भृंगारादि अलंकार देव के लिए समर्पित किए गए। इस प्रकार त्रिभुवन के गुरु की वैयावृत्य करती हुई वह वहीं रहने लगी और चतुर्विध—आहार, वस्त्र शयनासन आदि से अत्यंत भक्तिपूर्वक गुरुजनों की आराधना करने लगी। वह साधर्मी जनों से (अपूर्व) वत्सल-भाव दिखाने लगी। इस प्रकार जिन-भगवान एवं सुगुरुओं की शुश्रूषा करती हुई वह कन्या सम्यक्त्व को प्राप्त करके सुखपूर्वक समय व्यतीत करने लगी।

[६४] विसायमुव्वहह=विषादयुक्त रहती हुई। देवारामो=देव-वाटिका। फलफुल्लपत्तरमाउलो=फल-फूल-पत्ते नीबू एवं आम्रवृक्षादि। सिंचंतो=सींचने पर। अहिययरं=अधिक-अधिक। सस्सिरीओ=शोभायुक्त। निच्छओ=निश्चय। वारिज्जंतीवि=रोके जाने पर भी। जिणवेइयदुवारे=जिन-चैत्य के दरवाजे पर।

अन्य किसी समय उस कन्या ने मणिभद्र- सखा को देखकर उससे पूछा—"तात क्या कारण है कि आपका चित्त विषादयुक्त है?" तब उसने उत्तर में कहा—"पुत्रि, किसी कारण से हमारी देव-वाटिका के फल, फूल, पत्ते एवं आम्रवृक्ष विधिवत् सींचे जाने पर भी आजकल बड़ी तेजी से सूखते जा रहे हैं। उनमें हरियाली नहीं आ रही है। अतः मेरे मन में बहुत ही चिन्ता है।" वह बोली—"तात, यदि यही कारण है तब आप विषादयुक्त मत होइये, मैं अपने शील-गुण के माहात्म्य से इस वाटिका को जब तक पूर्ववत् ही फल, फूल एवं पत्तों से युक्त न कर दूंगी, तब तक चतुर्विध-आहार भी ग्रहण न करूँगी, ऐसा मैंने निश्चय किया है।" यह सुनकर सेठ ने उसे रोका, फिर भी वह शासनदेवी को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मन में धारण कर जिन-चैत्य के दरवाजे पर (निराहार रहकर) बैठ गई।

[६५] तओ=तब, तत्पश्चात्। तइयरयणीए=तीसरी रात्रि में। सासणदेवीए=शासनदेवी ने। पच्चक्खी होऊण=प्रत्यक्ष होकर। अज्जेव=आज ही। नवो=नवीन। होही=हो जाएगा। सीलपभावनासियपच्चणीयवंतरोवद्दवत्तणेण=शील की प्रभावना से विरोधी व्यन्तरदेव द्वारा किए गए उपद्रव। सट्ठाणं=अपने निवास पर। विभाया=समाप्त। विभावरी=रात्रि। सिट्ठिपुरओ=सेठ के सम्मुख। निवेइओ=निवेदित किया। हरिसुप्फुल्ललोयणो=हर्ष से विकसित नेत्रवाली। चेइयारामं=चैत्याराम को। अउव्व=अपूर्व। उव्विल्लिर=कम्पायमान। पल्लवाउलो=पल्लव-समूह से युक्त। पप्फुल्ल-फुल्लक्करसोरभुज्जलो=विकसित पुष्पों पर रसपान करते हुए भ्रमर-समूहों से युक्त। सया=सदा। हवेइ=होता है, लगता है, होगा, लगेगा। जए=संसार में ॥२६॥

तत्पश्चात् तृतीय रात्रि में शासन-देवी ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर उससे कहा—"वत्से, विषाद मत करो। विरोधी व्यन्तर-देव द्वारा कृत यह उपद्रव तुम्हारे शील के प्रभाव से नष्ट हो गया है, और अब आज ही प्रातःकाल वह देव-वाटिका पुनः नवीन रूप धारण कर लेगी।" यह कहकर जब शासन-देवी अपने स्थान पर चली गई, तभी रात्रि समाप्त हुई। उस कन्या ने यह वृतान्त सेठ के सम्मुख निवेदित किया। वह सेठ भी हर्ष से उत्फुल्ल नेत्रवाला होकर उस कन्या के साथ उस चैत्याराम में पहुँचा। वह आराम (वाटिका) कैसी थी—

"अपूर्व कम्पायमान पल्लवों से व्याप्त, रसपान करते हुए भ्रमर-समूहों से युक्त, विकसित पुष्पों से सहित, पके हुए फलों से सदा मनोहर लगने वाली वह वाटिका संसार में किसे मनोहर नहीं लगेगी?"॥२६॥

[६६] पंचसद्दनायपुव्वयं=पंचनमस्कार-मन्त्र के नाद-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पूर्वक। नेइ=ले आया। समणसंघपरियरिओ=श्रमण-संघ से परिवृत्त। उववूहइ=प्रशंसा की। लोओ=सभी लोग। सील-माहप्पचमक्किओ=शील के माहात्म्य से चमत्कृत्त। पिच्छह=देखो। सुक्को=सूखा हुआ। सच्छाओ=अपनी शोभा को। जयइ=जयवन्त। एरिसनरनारिरयणाणि=ऐसे नर-नारी रूपी रत्न। उपज्जंति=उत्पन्न होते है। पडिलाभिय=पडगाह कर। पारणं=पारणा (भोजन)।

उसे देखकर सेठ ने कहा—"मेरा मनोरथ सफल हुआ है।" पंच नमस्कार मन्त्र के नाद-पूर्वक तथा श्रमण-संघ से परिवृत उसे वह अपने भवन ले आया। लोग भी उस कन्या के शील के माहात्म्य के चमत्कार से उसकी प्रशंसा करते हुए कहने लगे—"देखो, सूखी हुई वाटिका भी पुनः कैसी छायादार हो गई है! अतः जिनशासन जयवन्त हो, जयवन्त हो, जिसमें इस प्रकार के नर-नारी रूपी रत्न उत्पन्न होते हैं।" इसके बाद उसने मुनि-संघ को पडगाह कर उसे पारणा कराई।

[६७] पच्छिमजामिणीए=पश्चिम रात्रि में। सुत्त-विउद्धा=सोकर उठी हुई। सरिऊण=स्मरण करके। परिणाम-विरसं=परिणाम-विरस। आवायमहुरं=प्रारम्भ में मधुर। किंपागफलं व=किंपाक फल के समान। अणोरपारसंसार=अगाध संसार को। पव्वज्जं=प्रवृज्या। पवन्ना=धारण की। अउन्ना=पापिनी। विसयामिसलुद्धा=विषय-सुख की लोलुपी। पत्थमाणावि=चाहने पर भी। अलद्धभोगा=अप्राप्त भोग। लद्धजिणमयरहस्सावि=जिन-सिद्धान्त के रहस्य को प्राप्त करके भी। सामण्णं=श्रामण्य। काउमसमत्था=पालन करने में असमर्थ। विसिट्ठतवो=विशिष्ट तप। विहाणेसु=विधान करने में। उज्जमिस्सं=उद्यमशील बनूं। सामिग्गहेहिं=सामग्रियों से। पोसंतीए वि=पोषण करते हुए भी। सोसियं=सुखा दिया।

अन्य किसी समय पश्चिम रात्रि में सोकर उठी हुई वह अपने पूर्व-वृतान्त का स्मरण कर विचार करने लगी—"वे धन्य हैं, जो परिणाम-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria; Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विरस, प्रारम्भ में मधुर, किन्तु (अन्त में) किंपाकफल के समान विषय-सुख को छोड़कर अगाध-संसार रूपी समुद्र को पार करने के लिए प्रवृज्या धारण कर लेते हैं। मैं पापिनी, विषय-सुख की लोलुपी, चाहने पर भी अप्राप्त-भोग वाली, किन्तु जिन-सिद्धान्त के रहस्य को प्राप्त करके भी श्रमणत्व के पालन करने में असमर्थ, गृहस्थ-धर्म का पालन करती हुई विशिष्ट तप करने में उद्यमशील बनूं।" तब उसने बहुविध सामग्रियों से एवं तप-कर्मों से धर्म-शरीर का पोषण करते हुए भी अपने शरीर को एकदम सुखा दिया।

[६८] अपच्छिम=अपश्चिम। मारणंतियसंलेहणं=मारणान्तिक सल्लेखना को। काऊणाणसणं=अनशन करके। पंचपरमिट्ठिसंभरणा=पंच परमेष्ठी का स्मरण करके। सोहम्मेकप्पे=सौधर्म कल्प (स्वर्ग) में। देवत्तणं=देवावस्था को। दिव्वाइं=दिव्यादि। भुंजिय=भोगकर। चइऊण=छोड़कर। अग्गिसम्ममाहणस्स=अग्निशर्मा ब्राह्मण की। दुहिया=पुत्री। समुप्पन्ना=उत्पन्न हुई हो। विज्जुप्पहनामिया=विद्युत्प्रभा नाम की।

तदनन्तर, अपश्चिम-मारणान्तिक सल्लेखनापूर्वक अनशन स्वीकार करके पंचपरमेष्ठि का स्मरण करती हुई, वह मृत्यु को प्राप्त होकर सौधर्म-स्वर्ग-कल्प में जाकर देवावस्था को प्राप्त हुई। वहाँ पर दिव्यादि भोग-सुखों को भोगकर तथा वहाँ से चय कर तुम अब अग्निशर्मा नामक ब्राह्मण के घर में विद्युत्प्रभा नाम की पुत्री के रूप में उत्पन्न हुई हो।"

[६९] बालत्तणे=बचपन में। किंचि=कुछ। मणुजम्मं=मनुष्य-जन्म को। पाविय=प्राप्त कर। देवत्तणमणुहविय=देवगति का अनुभव करके। मिच्छत्तिणो=मिथ्यात्वी। कुदंसणमोहियाए=कुदर्शन से मोहित। ठियाए=रहते हुए। पावमणुट्ठियं=पापों को करती रही। देवगुरु-वेयावच्चं=देवगुरु की वैय्यावृत्ति। माणिभद्दगिहट्ठियाए=मणिभद्र के घर में रहते हुए। पुण-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्साणुभावेण=पुण्य के प्रभाव से। अणन्न-सामण्णं=अनन्य श्रमणत्व को। सुहमणुपत्तं=सुख प्राप्त किया।

"तुम बालपन में कुछ दुखी रही। वह मणिभद्र सेठ भी देवगति का अनुभव कर मनुष्य-जन्म प्राप्ति कर, तत्पश्चात् नागकुमार जाति में देव हुआ और जो निर्भाग्या वहाँ मिथ्यात्वी-पिता के घर में रहकर कुदर्शन से मोहित हो कुछ पापों को करती रही, उसी के फलस्वरूप वह प्रथम अवस्था में दुखी हुई। पश्चात् मणिभद्र के घर में रहकर उसने देव-गुरु की जो वैयावृत्ति की, उसके पुण्य के प्रभाव से दूसरों के लिए कठिन सुख की उसे प्राप्ति हुई।

[७०] सच्छाओ=छायायुक्त। वच्चइ=चलेगा, चलता है। छत्ततय=तीन छत्र। मउडाइ=मुकुट आदि। दिन्नाइ=दिए हैं, चढ़ाए हैं। सव्वन्नुणो=सर्वज्ञ—जिनदेव के लिए। सव्वंगभूसिया=सर्वांगविभूषित। सियायवत्तच्छायाए=सितातपत्र की छाया में। हिंडसि=घूमती हो। रत्थाइं=रथ आदि। जिणगुरुवेयावच्चकरणोवज्जियसुकयरुक्खस्स=जिनेन्द्र एवं गुरु की वैय्यावृत्ति (सेवा) करने से उपार्जित सुकृत रूपी वृक्ष के। देवसुहाणि=देव-सुखों का। अणुहविऊण=अनुभव करके। रज्जसिरिं=राज्य श्री का। सिवसंपयं=मोक्षपद को। पाविहिसि =प्राप्त करोगी।

और, जो उसने जिन-मन्दिर की वाटिका को छायादार बना दिया, उसी के फलस्वरूप तुम्हारे साथ यह वाटिका चला करती है और जो छत्रत्रय मुकुट आदि आभरणों को सर्वज्ञदेव को प्रदान किये थे, उसी कारण सर्वांग-विभूषित सितातपत्र की छाया में तुम घूमती हो, और जो जिन-भवन में रथ आदि प्रदान किये थे उसी कारण तुझे बहुत प्रकार के भोग आदि प्राप्त हुए हैं। और अधिक क्या, जिन-गुरु की वैयावृत्ति के सुकृत्य रूपी वृक्ष के फल से तुम देव-सुखों का अनुभव करके मनुष्य-भव में भी राज्यश्री का भोग करके क्रमशः मोक्ष पद को प्राप्त करोगी।"

[७१] नाणीवयणमायन्निऊण=ज्ञानी के वचन सुनकर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुच्छा=मूर्च्छा में। निमीलियच्छी=मुद्रितनेत्र (मुंदे हुए नेत्र) वाली। पवणाइणा परियणेण=परिजनों के द्वारा पंखा किए जाने पर। समुप्पाइयचेयणा=चेतना को प्राप्त हुई। आइट्ठं= उपदेश दिया। जाइसरणेण=जातिस्मरण से। संसारवासाओ= संसारवास से। पियमापुच्छिऊण=प्रियतम से पूछकर। पवज्जं =प्रवृज्या। पडिवज्जिसं=स्वीकार करती हूँ। उव्विग्गं= उद्विग्न। संपयं=इस समय। पयमूले=चरणों में।

इस प्रकार ज्ञानी के वचन सुनकर आरामशोभा मूर्च्छित हो गई। परिजनों ने उस मुद्रित नेत्र वाली की हवा आदि करके मूर्च्छा दूर की। उसने उठकर गुरु को प्रणाम किया और इस प्रकार प्रार्थना की— "भगवन्, आपने जो उपदेश दिया है वह सब मुझे जाति-स्मरण से अब प्रत्यक्ष हो गया है। अतः मैं संसार-वास से उद्विग्न-चित्त होकर अब इसी समय अपने प्रिय से पूछकर तुम्हारे पादमूल में प्रव्रज्या स्वीकार करती हूँ।"

[७२] उस्सुक्का=उत्सुकतापूर्वक, शीघ्रता। मल्लसुंदर-कुमारं=मल्लसुन्दर नामक कुमार को। रज्जे=राज्य में। अहमवि=मैं भी। अच्चंतभवुव्विग्गमणो=संसार से अत्यन्त उद्विग्न मन होकर। ठविय=स्थापित कर, अभिषेक कर। गहिस्सामि=ग्रहण करूँगा। तणयं=पुत्र को। अहिसिंचिऊण= अभिषेक करके। कयजिणसासणप्पभावणो=जिनेन्द्र-वचनों से अपने आत्म को भावित करके। सद्धिं=साथ। महाविभूइए= महोत्सवपूर्वक। पडिवज्जिय=स्वीकार करके। गहियदुविह-सिक्खो=दो प्रकार की शिक्षा ग्रहण कर। कयत्थो=कृतार्थ। हुत्था=हुआ।

आरामशोभा के ये वचन सुनकर राजा ने कहा—"प्रिये, इतनी अधिक उत्सुक मत बनो। मैं भी इस संसार से अत्यन्त उद्विग्नमन हूँ। मल्लसुन्दर नाम के राजकुमार को राज्यगद्दी देकर तुम्हारे साथ ही मैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भी प्रव्रज्या ग्रहण करूँगा।" गुरु को नमस्कार कर वह राजा देवी आरामशोभा सहित घर आकर पुत्र का राज्याभिषेक करके, किये हुए जिन-शासन के प्रभाव से देवी के साथ महान् विभूति वाले उन गुरु के पादमूल में प्रवृज्या स्वीकार कर, क्रमश: द्विविध-शिक्षा ग्रहण कर कृतार्थ हुआ।

[७३] सूरीहिं=आचार्य ने। रायरिसी=राज-ऋषि (राजा जितशत्रु) को। गणहरपए=गणधर के चरणों में। पवत्तिणिपए=प्रवर्तिनी (गणिनी) के पादमूल में। पडिवोहिऊण=प्रतिवोधित करके। कयाणसणा=अनशन करके। सग्गं=स्वर्ग में। सव्व-विरइं=सम्पूर्ण वैराग्य। पाविस्संति=प्राप्त करेंगे। संठावियाइं=रख दिया। चविउ=चयकर (लौटकर)। लहिऊण=लेकर। कयसयलकम्मक्खया=समस्त अष्ट कर्मों का क्षय करके। सिवं पयं=शिवपद (मोक्षपद) को।

निसामिऊगं=सुन करके। सवणामियाभं=कानों के लिए अमृत के समान। देवाण=देवों का। गुरूणवेयावच्चं=गुरुओं की वैयावृत्ति। मुक्खं=मोक्ष को ॥३०॥

तब सूरियों (आचार्यों) ने उस राजऋषि को गणधर के चरणों में एवं उस आरामशोभा को एक प्रवर्तिनी के पादमूल में संस्थापित किया। तत्पश्चात् दोनों ही वहुत दिनों तक भव्यजनों को प्रतिवोधित करते हुए अनशन कर स्वर्ग सिधारे और वहाँ से चय कर मनुष्यभव में सर्वरूपेण वैराग्य प्राप्त कर समस्त कर्मों का क्षय करके वे शिवपद प्राप्त करेंगे।

"कानों के लिए अमृत के समान लगने वाला यही आरामशोभा का चरित्र है। इसे सुनकर देव एवं गुरु की वैयावृत्ति करो, जिससे कि शाश्वत सुख रूप मोक्ष को प्राप्त कर सको।" ॥३०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रस्थान की समस्त सामग्रियाँ तैयार कर ली गईं। उसी समय (कृत्रिम) आरामशोभा से परिचारकों ने पूछा—"बगीचा कहाँ है?" तब उसने उत्तर में कहा—"वह आज नहीं चलेगा, मैंने उसे पानी पीने हेतु कुँए में ठहरा दिया है। अतः वह बाद में आवेगा।"

[३५] बद्धाविओ=बधाई दी। पयट्टाविया=करवाई। हट्टसोहा=बाजारों की शोभा। पारद्धं=प्रारम्भ। बद्धावणयं=बधाईयाँ। संमुहगमणेण=सम्मुख जाकर। तणओ=पुत्र को। निरूविऊण=निरूपण करके। संभंतेण=भ्रमपूर्ण होकर। पुट्ठं=पूछा। अहो=अरे। अन्नारिसिच्चिय=बदली हुई के समान। तणुसिरी=शरीर की शोभा। निरूविज्जइ=दिखाई दे रही है। हेउ=हेतु। दिट्ठिदोसेण=दृष्टि-दोष के कारण। पसूइरोगेण=प्रसूति-रोग के कारण। संवुत्तं=हो गया। सम्मं=ठीक-ठीक। सुयजम्मपमुइओवि=पुत्र जन्म के कारण प्रमुदित होने पर भी। दइयावइयरसवणओ=पत्नी का वृत्तान्त सुनकर। विच्छाओ=विषाद से। जाओ=युक्त हो गया। धीरत्तमवलंविऊण=धैर्य धारण करके।

इसके बाद उसको साथ लेकर परिजन लोग पाटलिपुत्र पहुँचे। राजा को बधाई दी। राजा ने भी प्रमुदित मन से बाजारों को सजवा दिया, बधाइयाँ प्रारम्भ हुईं। स्वयं सम्मुख जाकर उसने देवी (कृत्रिम आरामशोभा) एवं कुमार को देखा। तभी प्रियतमा के विरूप सौंदर्य को देखकर आश्चर्यचकित होकर राजा ने उससे पूछा—"अरे, तुम्हारे शरीर का सौंदर्य विकृत क्यों दिखाई पड़ने लगा है, इसका क्या कारण है?" तब दासियों ने कहा—"महाराज, प्रसूति के समय दृष्टिदोष के कारण अथवा प्रसूति-रोग के कारण अथवा अन्य किसी कारण से इसकी देह-कान्ति कैसे विरूप हो गई, यह हम लोग भी ठीक-ठीक नहीं जान सके।" तब पुत्रोत्पत्ति के कारण अत्यन्त प्रसन्नचित होने पर भी वह राजा अपनी पत्नी का वृत्तान्त सुनकर विषाद से भर गया, फिर भी धैर्य धारण कर उसने उसके साथ नगर में प्रवेश किया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

[३६] सहयरो=सहचर । संलत्तं=उत्तर दिया । अज्ज-उत्त=आर्यपुत्र । समरिओ=स्मरण करने पर । समागमिही=आ जाएगा । पासइ=अवलोकन किया । संदेहपिसाएण=संदेह रूपी पिशाच से । अक्कमिज्जइ=आक्रान्त हो गया । अन्ना=अन्य । वुत्ता=कहा । आणेह=ले जाओ । मणाभिरामं=मनोरम । सविसेसं=विशेष रूप से । रायमणंमि=राजा के मन में । आसंका=आशंका । जाया=उत्पन्न हो गई ।

एक दिन राजा ने देवी से पूछा—"प्रिये, तुम्हारा निरन्तर का सहचर वह बगीचा अब यहाँ क्यों नहीं दिखाई देता ?" उसने भी उत्तर दिया—"आर्यपुत्र, बगीचा पीछे कुँए पर पानी पी रहा है । स्मरण करने पर वह आ जाएगा ।" राजा भी जब-जब उसके सर्वांग शरीर का अवलोकन करता तभी-तभी सन्देह रूपी पिशाच से वह अक्रान्त हो जाता कि क्या यह 'वही' है अथवा अन्य कोई दूसरी ? अन्य किसी दिन राजा ने पुनः रानी से कहा—"तुम उस मनोरम बाग को ले आओ ।" उसने भी उत्तर दिया— "प्रियतम, उसे बाद में ले आऊँगी ।" इससे राजा के मन में विशेष रूप से आशंका जागती गई ।

[३७] विन्नत्तो=प्रार्थना की । सुयविरहो=पुत्र का विरह । दढं=बहुत । पीडेइ=पीड़ित कर रहा है । पसीय=कृपा । वच्छं=वत्स (पुत्र) को । पिच्छामि=देख सकूँ । वच्च=जाओ । परं=किन्तु । पासिऊण=देखकर । सिग्घमागच्छेसु=शीघ्र आ जाना । तव्वयणमंगीकयं=उसका कथन स्वीकार कर लिया । साहिया=कहा । सूरुग्गमं=सूर्योदय के समय तक । चिट्ठिहिसि=ठहरोगी । संकेओ=संकेत । नियकेसपासाओ=अपने केश-पाश से । मयनागं=मृत नाग के । पडियं=गिरा हुआ । जंपियं=कहा । एयमवि=ऐसा ही । तियसेण=देव ने । उग्घाडिऊण=खोलकर । पइट्ठा=प्रविष्ट हुई । केरिसं=कैसा था ।

मणिदीवयं=मणिमय दीपक । संदीवियं=संदीप्त । सुपक्क-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

फलपूरियं=पके हुए फलों से प्रपूरित। महमहंत=अत्यधिक सुगन्ध। कप्पूरियं=कर्पूर ॥१६॥

पफुल्लकुसुमुक्करं=विकसित पुष्पों की पराग। अगरधूव=अगर एवं धूप। पणसुगंधियाडंबरं=पाँच प्रकार की सुगन्धि से व्याप्त ॥१७॥

इधर आरामशोभा ने (समय पाकर एक दिन) उस नागदेव से प्रार्थना की—"तात, पुत्र-विरह मुझे बहुत पीड़ित कर रहा है। अतः कृपा कीजिए और ऐसा उपाय करिये जिससे मैं अपने वत्स को देख सकूँ। तब उस देव ने कहा—"यदि ऐसा ही है, तब मेरे प्रभाव से (उसके पास) चली जाया करो, किन्तु पुत्र को देखकर शीघ्र ही वापस भी आ जाया करो।" आरामशोभा ने 'तथास्तु' कहकर उसका कथन स्वीकार कर लिया। इसके बाद देव ने पुनः कहा—"यदि वहाँ जाने पर तुम सूर्योदय-पर्यन्त ठहरोगी, तब उसके बाद से मेरा दर्शन तुम्हें कभी भी न हो सकेगा।" इस कथन का संकेत यह था कि "उस समय अपने केशपाश से मरकर गिरा हुआ एक सर्प देखोगी। उसके बाद तुम्हें मेरा कभी भी दर्शन न हो सकेगा।" यह सुनकर आरामशोभा ने कहा—"ऐसा ही होगा।' जैसे भी हो, एक बार अपने तनय को देख तो सकूँगी।"

इसके बाद देव ने उसे वहाँ भेज दिया। उसके प्रभाव से वहाँ निमेष-मात्र में ही पाटिलपुत्र पहुँच गई। राजा का निवास-स्थान खोलकर वह भीतर प्रविष्ट हुई। कैसा था वह राजभवन—

स्वर्ण-वर्ण की कान्ति से संदीप्त, जहाँ मणिमय दीपक प्रज्वलित थे, जो सुपक्व-फलों से प्रपूरित था तथा जो कर्पूर की सुगन्धि से महक रहा था।१६ ॥

जहाँ विकसित पुष्प-समूह बिखर रहे थे, अगर एवं धूप की सुगन्धि विस्तृत थी, जो सुन्दर रूप से अलंकृत था और पाँच प्रकार की सुगन्धियाँ जहाँ व्याप्त थीं।१७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

[३८] पुव्वाणुभूय=पूर्वकाल में अनुभूत। रयकेलि=रति-क्रीडा। सुमरणसंजाय=स्मरण करने से उत्पन्न। कुसुमसर=कामदेव के बाण। वियार=विकार। पसर=प्रसार। पिययम-पास=प्रियतम के पास। पसुत्त=सोती हुई। भइणी=बहिन को। निरूवण=देखकर। ईसावसविवसा=ईर्ष्यावश विवश। सवक्कि=सौतेली। पक्खेव=गिरा देना। संभरण=स्मरण से। उब्भूय=उद्भूत (उत्पन्न)। वयण=मुख। संभवं=उत्पन्न। तप्पमोयरसभरा=प्रमोद रूपी रस से प्रपूरित। धाइ=धात्री। सगासं=पास में। रमावेऊण=मनोरंजन कर। चउद्दिसंपि=चारों दिशाओं में। नियारामफुल्लफलपगरं=अपने बगीचे के उत्तम फूल-फल समूह की। खिवेऊण=वर्षा करके।

उस भवन को देखकर पूर्वकाल में अनुभूत रतिकेलि के स्मरण से कामदेव के बाण को प्रसारित करने वाले विचार के उत्पन्न होने पर भी, प्रियतम के पास सोती हुई अपनी (सौतेली) बहिन को देख कर, अत्यन्त ईर्ष्यावश सौतेली माता के द्वारा निर्मित कुँए में गिरा दिए जाने की दुर्घटना के स्मरण से अत्यन्त क्रोधित तथा अपने तनय के मुख-दर्शन से उत्पन्न प्रमोद के रस से प्रपूरित वह (आरामशोभा) क्षण भर तक स्थिर रहकर सैकड़ों धायों के मध्य में सोते हुए उस पुत्र के पास जा पहुँची। अपने सुकोमल हाथों से उसे उठाकर क्षणभर तक उसे खिलाकर चारों दिशाओं में अपने बगीचे के फूलों एवं फलों की वर्षा कर वह अपने निवासस्थान (कुँए) में वापस आ गई।

[३९] पभायसमए=प्रभात समय में। पूइओ=पूजा की। सुच्चा=सुनकर। कूडआरामसोहा=कृत्रिम आरामशोभा। समाणीयं=मँगवाया है। संपयं=इस समय। वासरे=दिन में। सक्किज्जइ=संभव। विलक्खवयणं=विरूप मुख को। अवस्स-मेस=यह अवश्य ही। तिन्नि दिणा=तीन दिन। अज्जवस्सं=आज अवश्य ही। अच्चंतं=अत्यन्त (सर्वथा)। विलक्ख-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वयणा=कान्तिहीन मुख। दंभो=दम्भ। कइदिणे=कितने दिन। छज्झइ=छिपा रहेगा।

प्रात:काल होते ही धायों ने राजा से विनती की—"स्वामिन्, आज ऐसा दिखता है कि फूलों एवं फलों से किसी ने कुमार की पूजा की है।" यह सुनकर राजा भी उसके पास आया और उसे देखकर उस कृत्रिम आरामशोभा से (उसका कारण) पूछा। उसने उत्तर में कहा—"मैंने अपने बगीचे का स्मरण कर उससे इन फूलों एवं फलों को यहाँ मंगवाया है।" तब राजा ने कहा—"इस समय भी उसे (बगीचे को) यहाँ क्यों नहीं बुला लेतीं?" उसने उत्तर में निवेदन किया—"उसे दिन में बुलाना सम्भव नहीं।" तब उसके विरूप मुख को देखकर राजा मन में सोचने लगा—"इसमें अवश्य ही कोई प्रपंच है।" इसी प्रकार तीन दिन व्यतीत हो गये। तब राजा ने रानी से कहा—"आज अवश्य ही उस बगीचे को ले आओ।" यह सुनकर उसका मुख सर्वथा कान्तिहीन हो गया। दम्भ कितने तक छिपा रहेगा?

[४०] चउत्थजामिणीए=चौथी रात्रि में। नियत्ता=वापिस जाने लगी। भूवइणा=राजा ने। करयलेण साहिय=हाथ से पकड़कर। साहिया=कहा, पूछा। पाणपिए=प्राणप्रिये। प्रियं जणं=प्रियजन को। पणयपरं=परम प्रणय को। विप्पयारेसि=ठग रही हो। पाणेसर=प्राणेश्वर। परमत्थि=किन्तु है। वागरेसु=कहो। मिल्हिस्सं=छोड़ूँगा। मुंचसु=छोड़ दीजिए। मं=मुझे। कल्ले=कल। अवस्सं=अवश्य ही। कहिस्सं=कह दूँगी। करयलचडियं=हाथ में आए हुए। चितारयणं=चिन्तामणि रत्न। हविस्सइ=होगा। पच्छातावो=पश्चात्ताप। पुहवीसरो=पृथिवीश्वर। मूलाओ=प्रारम्भ से। दुव्विलसियं=कुकृत्य (दुर्विलसित)। अरुणुग्गमो=सूर्योदय हो गया।

चौथी रात्रि में (वास्तविक) आरामशोभा पूर्ववत् ही सभी कृत्य करके जब वापस जाने लगी तभी राजा ने उसका हाथ पकड़कर कहा—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"हाय, प्राणप्रिये, प्रियजन के परम प्रणय को इस प्रकार क्यों ठग रही हो ?" यह सुनकर उसने कहा—"प्राणेश्वर, ठग नहीं रही हूं, किन्तु इसमें कुछ विशेष कारण है।" राजा ने कहा—"कहो क्या कारण है ? अन्यथा मैं छोड़ूंगा नहीं।" उसने भी विनयपूर्वक निवेदन किया—"नाथ, अभी तो मुझे छोड़ दीजिए, किन्तु कल इसका कारण अवश्य-अवश्य ही बता दूंगी।" तब राजा ने कहा—"क्या (इतना) मूर्ख हूँ कि हाथ में आये हुए चिन्तामणि रत्न को छोड़ दूं ?" (यह सुन) उसने भी कहा—"ऐसा करने से तुम्हें पश्चाताप ही होगा।" इतने पर भी राजा ने उसे छोड़ा नहीं। तब उसने प्रारम्भ से अपनी सौतेली माता के सभी कुकृत्यों को कह सुनाया। इसी में सूर्योदय हो गया।

[४१] केसकलावं=केश-पाश। विलुलियं=विलुलित, लुण्ठित। संठवमाणीए=आश्वस्त रखने वाला। मओ=मृत। विसायपिसायगहिउव्व=विषाद रूपी पिशाच से ग्रस्त होकर। झत्ति=तत्काल। मुच्छा=मूर्च्छित। निमीलियच्छी=नेत्र निमीलित करके। छिन्नसाहव्व=टूटी हुई शाखा के समान। महिवीढे=जमीन पर। सीयलोवयारेहिं=शीतलोपचार से। पत्तचेयणा=चेतना प्राप्त होकर। विसायसायरे=विषाद रूपी समुद्र में। पक्खिवसि=डाल रही हो। संनिज्झं=सान्निध्य। कुणमाणो=करते हुए। ताउव्व=पिता के समान। मज्झाएसं=मेरे आदेश से। विणा=बिना। अरुणोदयं=सूर्योदय। अन्नत्थ=अन्यत्र। चिट्ठिहिसि=रहोगी। भविस्सइ=होगा। अविसज्जियाए=नहीं जाने देने के कारण ही। मइवि=मैंने भी। संपय=इसी समय। तं=उस घटना को। वुत्तं=कह दिया है।

उसी समय उसके केशपाश में रहकर (निरन्तर) आश्वस्त रखने वाला वह सर्प उपमर्दित होकर भूमि पर गिर पड़ा। उसे देखकर वह बाला विषादरूपी पिशाच से ग्रस्त होकर तत्काल ही मूर्च्छित हो नेत्र निमीलित कर टूटी हुई शाखा के समान जमीन पर गिर पड़ी। शीत-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लोपचार से जब उसकी मूर्च्छा टूटी तभी राजा ने उससे कहा—"प्राणेश्वरी, किस कारण से तुमने अपने को विषादरूपी समुद्र में डाल दिया है ?" तब उसने कहा—"स्वामिन्, पिता के समान हितकारी यह नागकुमार देव, जो कि निरन्तर मेरे पास रहता रहा, उसने मुझसे कहा था—"मेरे आदेश के बिना सूर्योदय पर्यन्त यदि तुम अन्यत्र रहोगी, तो उसी क्षण से तुम्हें मेरा दर्शन न हो सकेगा। वेणी से मृतसर्प गिरेगा। अत: हे नाथ, आपने मुझे जो नहीं जाने दिया, उसी कारण ऐसा हो गया है।" उसके बाद से (वरदान-विहीन होकर) वह वहीं रहने लगी।

[४२] गोसे=प्रात:काल में। निविडबंधणेहिं=खूब कसकर, बाँधकर। कसाहिं=कोड़ों से। सहावसरलाए=स्वभाव से सरल।

उवरि=ऊपर। हियदइयं=हे हृदयेश्वर। पुव्वं=पूर्ववत्। पिक्खेसु=देखें ॥१८॥

जइविहु=यद्यपि। दुट्ठचित्ताए=दुष्टचित्ता। ठावणयं=घर में रखना। जुत्तं=उचित। वयणं=कथन। तुह=तुम्हारा। तहवि=तथापि। दुल्लंघं=दुर्लंघ्य ॥१९॥

मोयाविया=छुड़वा दिया। नियपासे=अपने पास में। ठाविया=रखवा लिया। भइणिं=बहिन को। परिपिच्छह=देखो। पच्चक्खं=प्रत्यक्ष में। सज्जणदुज्जणाण=सज्जनों एवं दुर्जनों की। विसेसं=विशेषता को ॥२०॥

प्रात: काल होते ही उसकी बहिन को बिना किसी दया के रस्से से खूब बाँधकर जब राजा ने कोड़े से पीटना प्रारम्भ किया, तभी स्वभाव से सरल आरामशोभा के चरणों में गिरकर वह उससे अपने को बचा लेने की प्रार्थना करने लगी। आरामशोभा ने भी राजा से निवेदन करते हुए कहा—

"हे स्वामिन्, यदि आप मेरे ऊपर कृपा कर सकें, तो मेरी इस बहिन को छोड़ दें। हे हृदयेश्वर, दया करके उसे पूर्ववत् ही समझें और प्रेम करें।॥१८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राजा ने भी उत्तर में कहा—"हे देवि, बात ऐसी ही है। यद्यपि इस दुष्ट-चित्ता के लिए जीवित छोड़ना उचित नहीं, तथापि तुम्हारा वचन भी दुर्लंघ्य है।" ॥१९॥

राजा ने उसे (कृत्रिम आरामशोभा को) छोड़ दिया एवं आरामशोभा को अपने समीप में ही रख लिया। (इस उदाहरण के माध्यम से) सज्जनों एवं दुर्जनों की विशेषता को प्रत्यक्ष ही देख लो। ॥२०॥

[४३] पलयानलं=प्रचण्ड अग्नि। पज्जलंत=प्रज्वलित। नियपुरिसा=अपने आदमियों को। हक्कारिऊण=बुलाकर। समाइट्ठा=आदेश दिया। दुवालस=बारह। कण्णणासऊडे=कर्ण एवं नासापुट। छिंदऊण=छेदकर। निव्वासेह=निर्वासित करो। वज्जग्गिफुल्लिंगउग्गं=वज्राग्नि के स्फुलिंग के समान उग्र। भत्तुणो=पति के। निवडिऊण=गिरकर।

जइ=यदि। कहवि=कभी, किसी प्रकार। डसइ=डँस ले। भसणो=कुत्ता। कोवि=कोई भी। खाइ=खा लेता है। सुयणो=सज्जन। इय मुणिय=यह समझकर। पणयं=प्रणय, कृपा ॥२१॥

तब प्रचण्ड अग्नि की तरह प्रज्वलित उस राजा ने अपने आदमियों को बुलाकर आदेश दिया—"उस अग्निशर्मा ब्राह्मण से बारहों ग्रामों को छीनकर, अग्निशर्मा एवं उसकी पत्नी के कान एवं नाक छेदकर, उन्हें मेरे देश से निर्वासित कर दो।" वज्राग्नि के स्फुलिंग के समान उग्र राजा के इन वचनों को सुनकर आरामशोभा ने पति के चरणों में गिरकर प्रार्थना की—

"जिस प्रकार कुत्ता किसी सज्जन पुरुष को काट लेता है, तो क्या वह (सज्जन) भी उसे काट लेता है? यह समझकर ही हे नाथ, मेरे पिता को भी सजा से मुक्त कर मेरे ऊपर कृपा कीजिए ॥२१॥"

[४४] तच्चित्तखेयपणोयणत्थं=उस आरामशोभा के चित्त

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

के विषाद को दूर करने के लिए। विसयसुहमणुहवंताणं= विषय-सुख का अनुभव करते हुए उन दोनों का। सुहंसुहेण= अत्यन्त सुखपूर्वक। वच्चइ=व्यतीत होने लगा।

इस प्रकार देवी के आग्रह से राजा ने उसके चित्त के विषाद को दूर करने के लिए ही उसके पिता को बारह ग्राम पूर्ववत् ही वापिस दे दिये और उसके बाद वे दोनों राजा-रानी विषय-सुखों का अनुभव करते हुए सुखपूर्वक समय व्यतीत करने लगे।

[४५] परुप्परं=परस्पर में। धम्मवियारं=धर्मविचार। कुणंताणं=करते हुए। कम्मस्स=कर्म का। परिणामो=फल। एयमत्थं=इसलिए। पुच्छामि=पूछना चाहती हूँ।

किसी एक समय परस्पर में धर्म-विचार करते हुए आरामशोभा ने इस प्रकार का वार्त्तालाप किया—"प्रियतम, पूर्वकाल में मैं दुखी होकर बाद में सुख-भागिनी बनी थी। इससे मुझे ऐसा प्रतिभासित होता है कि यह किसी पूर्व कर्म का ही फल है। इसीलिए यदि कोई ज्ञानी मिले, तो मैं उससे इसका कारण पूछना चाहती हूँ।"

[४६] उज्जाणपालओ=उद्यानपाल ने। आगंतूण= आकर। नंदणुज्जाणे=नन्दन-वन में। करकलिय=हाथ में रखे हुए। मुत्ताहलमिव=मुक्ताफल के समान। सयलभावे=समस्त पदार्थों को। वियाणमाणो=जानने वाले। पंचसय=पाँच सौ। साहुपरियरिओ=साधुओं के साथ। सिरीवीरचंदसूरी=श्री वीर-चन्द सूरि। समोसरिओ=पधारे हैं। हरिसभरुब्भिन्नरोमंचो= हर्ष के वश से रोमाञ्चित होकर। पीइदाणं=प्रीतिदान को। विसज्जेइ=विसर्जित किया। अज्जेवागओ=आज ही आगमन हो गया। तिपयाहिणा=तीन प्रदक्षिणाएँ। मुणिंदं=मुनिराज को। जहोच्चियट्ठाणे=यथोचित स्थान पर। भगवया=भगवान ने। पारद्धा=प्रारम्भ किया। देसणा=उपदेश।

अणोरपारे=समुद्र के समान अपार, असीमित। भमंतो वि=

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भ्रमण करता हुआ भी। सया=सदा। पावाओ=पापों के। दुक्खरिंछोलि=दुःखों से मुक्ति। लहंते=प्राप्त कर सकते हैं ॥२२॥

इस प्रकार के वार्त्तालाप के समय ही उद्यानपाल ने आकर प्रणाम किया और राजा से निवेदन किया—"देव, हाथ पर रखे हुए मुक्ताफल के समान ही समस्त पदार्थों को एक साथ जानने वाले श्री वीरचन्द सूरि अपने पाँच सौ साधुओं के साथ नन्दनवन-उद्यान में पधारे हैं।" यह सुनकर हर्ष वशात् रोमाञ्चित होकर राजा ने उस उद्यानपाल के लिए प्रीतिदान देकर विसर्जित किया। उसके बाद राजा ने कहा—"प्रिये, उठो, तुम्हारा मनोरथ पूर्ण हो गया क्योंकि (इच्छित) महात्मा का आगमन आज ही हो गया। राजा अपनी आरामशोभा सहित समस्त लोगों से आवृत्त होकर उद्यान में गया और तीन प्रदक्षिणाएँ देकर मुनिराज को प्रणाम करके यथोचित स्थान पर बैठ गया। भगवान् ने अपना उपदेश इस प्रकार प्रारम्भ किया—

"पाप रूपी दुखों से सन्तप्त प्राणी इस अपार-संसार में निरन्तर भटकते हुए धर्म से ही सुख प्राप्त कर सकते हैं।" ॥२२॥

[४७] धम्मदेसणावसाणे=धर्मोपदेश के पश्चात्। जोडिय-करसंपुडा=दोनों हाथ जोड़कर। भयवं=भगवन्। सजलजल-हरगंभीर=सजल मेघ के समान गम्भीर। सरेण=स्वर से। वागरिउमाढत्तो=कहना प्रारम्भ किया।

धर्मोपदेश के पश्चात् दोनों हाथ जोड़कर आरामशोभा ने गुरु से निवेदन किया—"भगवन्, आपने जिस प्रकार कहा है, वह वस्तुतः वैसा ही है। किन्तु पूर्वभव में मैंने क्या किया था? अतः कृपाकर वही मुझे बताइये।" तब सूरि ने भी सजल-मेघ के समान गम्भीर-स्वर से कहना प्रारम्भ किया—

[४८] जंबूद्दीवे=जम्बूद्वीप में। भारहे वासे=भारतवर्ष में। चंपाए=चम्पा नाम की। नयरीए=नगरी है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सयललोय=समस्त लोकों में। धणउव्व=कुबेर के समान। समिद्धो=समृद्ध। कुलंधर नामा=कुलंधर नाम का। सिट्ठी=सेठ। कुलाणंदा=कुलानन्दा नाम की। रूवलडहलायण्ण=रूप सौन्दर्य एवं लावण्य से व्याप्त। कमलसिरी=कमलश्री। कमलवई=कमलवती। कमला=कमला। जसएवी=यशदेवी। पियकारिणी=प्रियकारिणी। धणवंतकुलेसु=धनी एवं कुलीन घरानों में। दिव्ववसा=दैववशात्। अट्ठमिया=आठवीं पुत्री।

इसी जम्बूदीप नामक द्वीप वाले भारतवर्ष में चम्पा नाम की नगरी है। वहाँ सभी लोकों में प्रसिद्ध कुबेर के समान समृद्ध कुलन्धर नामक एक सेठ निवास करता था। उसकी कुलानन्दा नामकी पत्नी थी। उसके साथ विषय-सुख का अनुभव करते हुए क्रम से अत्यन्त सौन्दर्य एवं लावण्य से युक्त सात पुत्रियाँ उत्पन्न हुईं—कमलश्री, कमलवती, कमला, लक्ष्मी, श्री, यशदेवी एवं प्रियकारिणी। धनी एवं कुलीन घरानों में वे विवाहित हो गईं और भोगों को भोगती हुईं सुखपूर्वक रहने लगीं। दैववशात् उनके एक आठवीं कन्या का भी जन्म हो गया।

[४९] नामं=नामकरण। कुणंति=किया। वड्ढंती=बढ़ती हुई। जुव्वणमणुपत्ता=युवावस्था को प्राप्त हो गई। पिक्खंताणं=देखते हुए। परियणेण=परिजनों के द्वारा। अणायरेण=अनादरपूर्वक। निब्भग्ग=निर्भाग्या। अम्मापिऊणं=माता-पिता को। अईव=अतीव। उव्वेओ=उद्वेग। बुड्ढकुमारिम=वृद्ध कुमारी का। गरुयं अववायं=भारी अपवाद (निन्दा) को। पामिहिसि=प्राप्त होओगे। खेयं उव्वहंतो=भारी दुखी होता हुआ।

उस समय (उसे देख) माता-पिता अत्यन्त दुखी हो उठे। उन्होंने उसका नामकरण भी नहीं किया। वह भी अनादरपूर्वक वृद्धिगत होती हुई युवावस्था को प्राप्त हुई। लोक में उसका नाम 'निर्भाग्या' प्रसिद्ध हो गया। उसे देखकर माता-पिता अत्यन्त उद्वेग से भर उठते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक दिन एक परिजन ने उस सेठ से कहा—"इस वृद्धा कुमारी का विवाह न करने के कारण लोक में तुम भारी निन्दा को प्राप्त होओगे।" इस प्रकार कहे जाने पर भी मन में भारी दुखी होता हुआ वह दुख-पूर्वक समय बिताने लगा।

[५०] हट्टम्मि=दुकान पर। मलमइलगत्तो=मैल से मलिन गात्र। दीहमग्गुल्लंघण=लम्बे मार्ग की पैदल-यात्रा करने के कारण। परिस्संतो=परिश्रान्त। पहिओ=पथिक। दिट्ठीगोयरं=दृष्टिगोचर। जाई=जाति। किम-अत्थ आगओसि=किस प्रयोजन से आए हो? संलत्तं=कहा। सागरतीरमंडणाओ=सागरतीर-मण्डल के। चउडदेसाओ=चोड देश से। कोसलदेस मंडणाए=कोशलदेश मण्डल के। कोसलाए=कोशल के। समागओ=आया हूँ। नंदसिट्ठिणो=नन्द नामक सेठ की। सोमाए=सोमा नाम की। भारियाए=पत्नी की। कुच्छि-समुब्भूओ=कुक्षि से उत्पन्न। नंदणाभिहाणो=नन्दन नाम का। तणओ=पुत्र। खीण=क्षीण। विहवो=वैभव। अत्थोवज्जणत्थं=अर्थोपार्जन-हेतु। चोडदेसं=चौडदेश। अणुवज्जियदविणो=द्रव्योपार्जन किए विना। दालिद्दोवद्दुओ=दरिद्रता से विवश होकर। अभिमाणनडिओ=अहंकारवश। सदेसं=स्वदेश को। परघरेसु=दूसरे के घर में। कज्जाइं=कार्यादि को। उअर-भरणं=उदर-पोषण। वसंतदेवेण=वसन्तदेव ने। लेहं=लेख (पत्र)। तप्पिउणो=उसके पिता को। सिरिदत्तसिट्ठिणो=श्रीदत्तसेठ को।

एक बार वह सेठ अपनी दूकान पर बैठा था कि मलिनगात्र, लम्बे मार्ग की पैदल-यात्रा करने के कारण परिश्रान्त एक पथिक उसे दृष्टि-गोचर हुआ। सेठ ने उससे पूछा—"कहाँ से आ रहे हो? तुम कौन हो और कहाँ जा रहे हो? तुम्हारा क्या नाम है और यहाँ किस प्रयोजन से आये हो?" यह सुनकर उसने उत्तर में कहा—"मैं सागरतीर-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मण्डल के चोड देश से आया हूँ और कोशल देश-मण्डल के कोशल के निवासी नन्दसेठ की सोमानामक पत्नी की कुक्षि से उत्पन्न नन्दन नामका पुत्र हूँ। क्रम से क्षीण-वैभव होने के कारण अर्थोपार्जन के हेतु मैं चोड़-देश गया था। वहाँ भी द्रव्योपार्जन किये विना ही दरिद्रता से विवश होकर एवं अहंकार-वश स्वदेश नहीं गया। वहीं पर दूसरे के घर में कार्य करता हुआ उदर-पोषण करने लगा और इधर, उसी चोडदेश के निवासी वसन्तदेव ने किसी कार्यवश अपना पत्र देकर मुझे यहाँ पर स्थित अपने भवन में भेजा हैं। कृपाकर मुझे आप उसका वह घर दिखा दें, जिससे मैं उसके पिता श्रीदत्त सेठ को उसका पत्र दे सकूं।"

[५१] महदुहियाए=मेरी पुत्री के लिए। वरो=वर, पति। जुग्गो=योग्य। निब्भगाए=अभागी के लिए। निब्भग्गसेहरो=भग्नशेखर, अत्यन्त अभागा। केवि=कोई भी। इत्थ=यहाँ। एही=आएगा, लौटेगा। पलोइज्जइ=दिखाई पड़ता है। परदेसिओ=परदेशी। परिणिऊण=विवाह करके। अहंकार-नडिउव्व=अहंकार से व्याकुल। ससुरघरसमोवे=ससुर के घर के समीप। कइया=कभी। मह=मेरे। आगच्छ=आओ। परमो=उत्कृष्ट। पढमं=सबसे पहले। पच्छा=बाद में। आगमिस्सं=आऊँगा। मित्तो=मित्र। कज्जेणाहमागओ=मैं जिस कार्य से आया हूँ। सिक्खविय=सिखा-पढ़ाकर। समं=साथ। आणे-यव्वो=ले आना।

तब कुलन्धर ने भी अपने मन में विचार किया—"मेरी निर्भाग्या पुत्री के लिए यह कोई अभागा एवं परदेशी व्यक्ति योग्य वर सिद्ध हो सकता है। इसके साथ उसका विवाह करके यह पुनः यहाँ न लौटेगा जैसा कि यह अहंकार से व्याकुल जैसा दिखाई देता है। क्योंकि ऐसा व्यक्ति कभी भी ससुर के घर के समीप नहीं ठहरेगा।" अतः वह उससे बोला—"वत्स, मेरे घर चलो। क्योंकि उस (वसन्तदेव) का पिता मेरा परममित्र है।" उसने भी उत्तर में कहा—"तात, जिस कार्य से मैं यहाँ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आया हूँ, सर्वप्रथम उसे ही पूर्ण करके बाद में तुम्हारे घर आऊँगा।" तब सेठ ने अपने पुरुष को इस प्रकार सिखा-पढ़ाकर उसके साथ भेज दिया— "भद्र, जब यह व्यक्ति अपना पत्र (श्रीदत्त सेठ को) दे दे, तभी उसे मेरे पास वापस ले आना।"

[५२] सव्वसंदेसपुव्वं=सभी सन्देशों से युक्त। वाइओ=पढ़ा। जणयमित्तो=पिता का मित्र। कुलंधरसिट्ठी=कुलंधर सेठ। आहवणत्थं=आह्वान के लिए, बुलाने के लिए। मिलिऊण=मिलकर। परिवसइ=निवास करता है।

वह व्यक्ति उसके साथ श्रीदत्त सेठ के घर गया। उसे प्रणाम करके सभी सन्देशों से युक्त वह पत्र उसे समर्पित कर दिया। उसने भी वह पत्र पढ़ा। तभी उस नन्दन ने श्रीदत्त से कहा—"हमारे पिता के मित्र कुलन्धर-सेठ यहाँ निवास करते हैं। उन्होंने मुझे अपने यहाँ बुलाने हेतु इस व्यक्ति को मेरे पास भेजा है। अतः उससे मिलकर मैं पुनः तुम्हारे पास लौट आऊँगा।

[५३] पुरिसेण=पुरुष के द्वारा। ण्हाविय=नहवाकर। अहिणववत्थाणि=अभिनव वस्त्र। नियंसाविय=पहनाकर। विसिट्ठभोयणं=विशिष्ट भोजन को। भुंजाविय=कराकर। तंबोलं=ताम्बूल। अज्जवि=आज ही। धूयं=पुत्री को। पेसिस्सं=भेजूंगा। नीविं दाऊण=द्रव्य-सम्पत्ति के साथ विदाई करके। पडिवन्नतव्वयणो=उसकी बात स्वीकार कर ली।

तब उस पुरुष के साथ वह पुनः सेठ के घर वापिस लौटा। उसके पश्चात् सेठ ने उसे नहवाकर अभिनव-वस्त्र पहिनाकर विशिष्ट भोजन कराकर तथा ताम्बूलादि देकर उससे कहा—"वत्स, मेरी पुत्री के साथ परिणय कर लो।" उसने उत्तर में कहा—"मुझे आज ही चोड देश पहुँचना है।" कुलन्धर ने कहा—"इस कन्या के साथ परिणय करके द्रव्य-सम्पत्ति देकर तुम्हारे साथ ही मैं इसे भेज दूंगा।" तब नन्दन ने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उसकी बात स्वीकार कर उसकी निर्भाग्या नामक कन्या के साथ विवाह कर लिया।

[५४] इत्थ=यहाँ। चिट्ठसि=ठहरते हो। अवरं जणं=दूसरे व्यक्ति को। पट्ठविस्सं=भिजवाना पड़ेगा। गरुयं=महत्वपूर्ण। ससुरमापुच्छिय=ससुर से पूछकर। चउडविसयं=चोडदेश। मणोरहोचियं=मनोरथोचित। वच्चेसु=जाओ। जुग्गयं=योग्य। भंडयं=भोजन सामग्री आदि।

विवाहोपरान्त श्रीदत्त ने उनसे कहा—"यदि तुम यहाँ रुकोगे तब किसी दूसरे व्यक्ति को पत्र देकर वहाँ (वसन्तदेव के पास) भिजवाना पड़ेगा। क्योंकि वहाँ हमें आवश्यक कार्य है।" नन्दन ने भी उत्तर में कहा—"ससुर से पुछकर ही वहाँ वापिस जाऊँगा।" उसने जाकर ससुर से पूछा—"तात, श्रीदत्त को अत्यावश्यक काम है, उसी कारण वह मुझे चोड देश भेज रहा है।" सेठ ने भी विचार किया—"यह तो मेरे मनोरथोचित ही कह रहा है।" अतः सेठ ने कहा—"वत्स, तुम अपनी पत्नी के साथ चले जाओ। तुम्हारे योग्य भोजन-वस्त्रादि सामग्री उसी स्थान पर भिजवा दूंगा।"

[५५] कहणिज्जं=कहने योग्य। घित्तूण=लेकर। संबल-मित्तसहाओ=मित्र का सहारा लेकर। इक्कल्लओ=अकेला ही। उज्जेणिं=उज्जयिनी नगरी। लहुपयाणएहिं=अल्प प्रयाण करने से। बहुभक्खियं=अधिक खाने के कारण। संबलं=नाश्ता। मग्गपारो=मार्ग को पार करना। वंछियदेसं=वाञ्छित देश को। ता=इसलिए। सुत्तं मुत्तूण=सोता हुआ छोड़कर। वच्चामि=चला जाऊँ।

उसने जाकर श्रीदत्त के लिए यह वृतान्त कह सुनाया—"मेरे आगे कथनीय कहो।" उसने भी उसके लिए पत्र लिखकर दे दिया और सन्देश भी निवेदित कर दिया। तब वह अपनी नव-परिणीता को लेकर, एवं उसे ही मित्र का सहारा समझकर अकेला ही चल दिया और क्रम से

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उज्जयिनी नगरी पहुँचा। वहाँ पहुँचने के बाद वह विचार करने लगा—"अल्प प्रयाण करने से, नाश्ता ज्यादा लेने से अथवा पत्नी के साथ रहने से मार्ग पार नहीं किया जा सकता। इसलिए इसे यदि सोता हुआ ही छोड़कर चल दूँ, तब यथाशीघ्र ही वाञ्छित देश को पहुँच सकूंगा।"

[५६] पक्खीणं=समाप्ति। भिक्खाभमणेण=भिक्षा के लिए भ्रमण। भमिहिसि=घूमोगी। नवत्ति=अथवा नहीं। पिट्ठिलग्गाए=पीछे-पीछे लगकर। महूसवसारिसी=महोत्सव के सदृश। परुप्परं=परस्पर में। मंतयंता=विचार करते हुए। सुत्ता=सो गए। अणाह=अनाथ। पहियसालाए=पथिकशाला में। दोवि=दोनों। गहिय=लेकर। उट्ठिय=उठकर। लज्जंतो=लज्जित होने के कारण। संबलपुट्टलयं=नाश्ते की पोटली। सणियं सणियं=धीरे-धीरे। अवरमग्गेण=दूसरे मार्ग से। पलाणो=भाग गया।

नन्दन उज्जयिनी में निर्भाग्या को छोड़कर भाग जाना चाहता था। अतः उसने अपनी पत्नी से कहा—"प्रिये, नाश्ता की समाप्ति होने पर क्या किया जायेगा? यदि घूम-घूमकर भिक्षा माँग कर उदर-पूर्ति करनी पड़े, तब तुम्हें भी मेरे साथ घूम-घूमकर सिर झुकाकर भिक्षा-वृत्ति करनी पड़ेगी। क्या यह उचित होगा?" ऐसा कहे जाने पर पत्नी ने कहा—"तुम्हारे पीछे-पीछे चलकर भिक्षा माँगना भी मुझे महोत्सव के सदृश होगा।" इस प्रकार परस्पर में विचार-विमर्श करते हुए नगरी के बाहर अनाथों की पथिकशाला में वे दोनों सो गए। इसके बाद भिक्षा-वृत्ति के लिए लज्जित होने के कारण पत्नी को वहीं सोती हुई छोड़कर नाश्ता की थैली लेकर धीरे-धीरे वह उठा, और दूसरे मार्ग से भाग गया।

[५७] संजाए=होने पर। पियं अपिक्खंति=प्रियतम को न देखकर। इओ-तओ=इधर-उधर दइओ=पति। तरल-तरले=तरलदृष्टि। खिवंती=क्षेप करती हुई। हाहारवमुहुर-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुही=मुख से तीव्र हाहाकार शब्द करती हुई। अंसुपवाहण्ह-विय=अश्रुप्रवाह से स्नान कराती हुई। थणकलसजुयला=अपने स्तन-कलशों को। उत्तट्ठहरिणिव्व=आक्रान्त हरिणी के समान। दीणवयणा=दीनमुख से। पलविउं लग्गा=प्रलाप करने लगी।

एगागिणिं=एकाकिनी। अणाहं=अनाथ। अबलं=अबला को। लंघेऊणं=उल्लंघन करके। चइय=छोड़कर। दइय=हे पति। कत्थ=कहाँ। नियकुलमज्जायं=अपने कुल की मर्यादा को। संपइ=इस समय ॥२३॥

निल्लज्जसेहर=निर्लज्जों के सरदार। तरुणि=तरुणियों के। निक्करुण=निष्करुण, निर्दय। लहडलायण्णं=सौन्दर्य और लावण्य। निब्भरपिम्मं=प्रेम पर ही आश्रित रहने वाली। दइयं=प्रिया को। दंसेसि=दिखाओगे ॥२४॥

नवजुव्वण=नवयौवन को। ललियंगि=ललितांगी को। बलेणावि=बलात्कार पूर्वक। छिवइ=स्पर्श कर ले। वयणिज्ज-मणिज्ज=कामदेव के समान सुन्दर ॥२५॥

तत्पश्चात् प्रातःकाल होते ही जब पत्नी ने अपने पति को वहाँ न देखा, तब इधर-उधर अपना तरल दृष्टिक्षेप करती; नाश्ते की थैली को भी न देखकर विचार करने लगी—"निश्चय ही मेरा प्रियतम मुझे छोड़कर भाग गया है। अतः वह अपने मुख से तीव्र हाहाकर शब्द करती हुई अश्रुप्रवाह से अपने स्तन-कलशों को स्नान कराती हुई, आक्रान्त-हरिणी के समान दीनमुख से इस प्रकार प्रलाप करने लगी—

"अब मैं एकाकिनी अनाथ हो गई हूँ। मेरे पति ने मुझे छोड़कर अबला बना दिया है। हे नाथ, तुम कहाँ हो, अपने कुल की मर्यादा का उल्लंघन कर इस समय कहाँ चले गये हो? ॥ २३ ॥

"हाय-हाय, हे निर्लज्ज सरदार, तरुणियों के प्रति निष्करुण, तुम्हारे प्रेम पर ही आश्रित रहने वाली, सौन्दर्य एवं लावण्य से परिपूर्ण अपनी प्रिया को त्यागकर अब तुम किसके लिए अपना मुँह दिखाओगे?" ॥२४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"कामदेव के समान हे अवर्णनीय, मुझ नवयौवना, ललितांगी का यदि कोई वलात्कारपूर्वक स्पर्श भी कर ले, तव क्या तुम्हारे कुल की निन्दा न होगी ?'' ॥ २५ ॥

[५८] छुट्टिज्जए=छुड़ाया जा सकेगा। परिदेविएण= पीड़ित होकर। जीवियाओवि=जीवन से भी। अब्भहियं= अत्यधिक। सीलं=शील-धर्म की। उवायं=उपाय। पिउहरं= पितृगृह को। गउरवं=गौरव, स्वाभिमान। वणियं=व्यापारी। सुदिढ=सुदृढ़। दुस्सीलेहिंतो=दुष्ट चरित्र वालों से। धम्म-धणियं=धर्म के धनी। जणयं काऊण=पिता वनाकर। समंतओ=चारों ओर। निरवज्जाणि=निर्दोष। अत्तणो= अपना। धीरत्तमवलंविय=धैर्य धारण करके। महापुरिसं= महापुरुष को। निवडिऊण=गिरकर। सकरुणसरं=सकरुणस्वर से। सच्छंदा=स्वच्छन्द। इत्थी=स्त्री। खिसिज्जइ=भृष्ट कर दी जाती है।

वालत्तणंमि=बालापन में। जुव्वणपत्ताइ=यौवन प्राप्त होने पर। वुड्ढत्तणेण=वृद्धा होने पर। सच्छंदत्तं=स्वच्छन्द रहना ॥२६॥

अथवा—"अव इस परिदेवन से क्या लाभ ? पूर्वकृतकर्म का फल छुटाया नहीं जा सकता, तो भी क्यों न कोई उपाय करूँ जिससे जीवन से भी अधिक मूल्यवान अपने शीलधर्म की सुदृढ़ हृदय होकर दुष्टचरित्र वालों से मैं सुरक्षा कर सकूँ। अतः अव अपने पितृघर ही चलूँ अथवा वहाँ जाने में भी मुझे गौरव प्राप्त न होगा। अतः यहीं प्रशंसनीय धर्म के धनी, किसी वाणिक् को धर्मपिता मानकर उसके घर निर्दोष-कार्य करते हुए क्यों न अपना निर्वाह करूँ ?'' इस प्रकार धैर्य धारण कर वह वाला उज्जयिनी नगरी में प्रविष्ट होकर चारों दिशाओं में उसे खोजती हुई भटकती रही। वहीं पर उसने एक वणिक् महापुरुष को देखा। उसके चरणों में गिरकर वह सकरुण स्वर से वोली—"तात, मुझ अनाथिनी के के लिए तुम्हारे ही चरणों की शरण है। क्योंकि स्वच्छन्द स्त्री निश्चय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ही दुष्टों के द्वारा शीलभ्रष्ट कर दी जाती है। कहा भी गया है—

बालपन में पिता, युवती होने पर पति और वृद्धा होने पर पुत्र उसकी रक्षा करता है। नारी कभी भी स्वच्छन्द नहीं रह सकती।" ॥२६॥

[५९] मणिभद्दसिट्ठिणा=मणिभद्र सेठ ने। कुलंधरववहारिणो=कुलंधर नाम के व्यापारी की। वल्लहेण=पति के। भट्ठा=भ्रष्ट (नष्ट, छूट गया)। तव्वयणामयसित्तुव्व=उसके मुख से अमृतसिक्त वचन। सत्थाइ=सार्थ आदि की। गवेसणं=खोज के लिए। वत्ता=कुशल-वृत्तान्त। पत्ता=आया। सत्थस्स=सार्थ का। वयणमवितहं=वचन प्रामाणिक हैं। वितहं=अप्रामाणिक। जाणणकए=जानने के लिए। सिक्खविय=सिखाए-पढ़ाए।

तब उस मणिभद्र सेठ ने उससे पूछा—"वत्से, तुम कौन हो?" प्रत्युत्तर में वह बोली—"तात, चम्पानगरी के एक कुलन्धर नामक व्यापारी की पुत्री हूँ। पति के साथ चोड देश जाने के लिए प्रस्थान किया था, किन्तु उसका साथ छूट गया है। अतः मुझे यहाँ आना पड़ा है। यह अत्युत्तम होगा, यदि आप मेरे धर्म-पिता बन जाएँ।" उसके मुख से आनन्दित करने वाले उस अमृतसिक्त वचन को सुनकर वह बोला—"वत्से, मेरे घर चलो, पुत्री के समान मेरे घर में रहो। तुम्हारे परिवार की खोज के हेतु सार्थ आदि को भेजूंगा एवं निर्वाह की अन्य समस्त सामग्री तुझे प्रदान करूँगा।" उसने (उसके परिवार की खोज के लिए) अपने सेवकों को सभी दिशाओं में भेज दिया। किन्तु उन्हें उसके विषय में कोई गन्ध तक न मिली। अतः उसके (सेठ के) मन में संशय उत्पन्न हो गया कि "इस कन्या का वचन प्रामाणिक है अथवा अप्रामाणिक?" यही जानने के लिए उसने चम्पानगरी में कुलंधर-सेठ के पास प्रशिक्षित (सिखाये-पढ़ाये) एक व्यक्ति को भेजा। उसने भी जाकर वहाँ कहा—

[६०] नियनियभत्तुणो=अपने-अपने पतियों के साथ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अट्ठमिया=आठवीं। सत्त=सात। संपयं=इस समय। संपत्थिया =गई है।

"सेठ, मुझे मणिभद्र सेठ ने तुम्हारे पास भेजा है। यदि तुम्हारी कोई कन्या हो, तो उसका विवाह-सम्बन्ध कर दीजिए।" तब कुलन्धर ने कहा—"मेरी सात पुत्रियों की शादी इसी नगर में हुई है, जो अपने-अपने पतियों के साथ रहती हुई सुखपूर्वक रह रही हैं। पुनः आठवीं पुत्री की शादी अभी-अभी की है, जो अपने पति के साथ चोड़ देश गई है। अब और तो कोई कन्या है नहीं, जिसकी कि तुम लोगों के यहाँ सम्बन्ध-वार्त्ता चलाई जा सके।"

[६१] गउरवं=गौरव (आदर)। विणयाइणा=विनय आदि के द्वारा। सपरियणं=पजिननों सहित। तं अणुरंजइ= उनका मनोरंजन करती रहती है।

ज्ञातेयडम्बर:=जाति का आडम्बर। वानेयं=जंगली घास, सुगन्धित घास। पुष्प=फूल। अंगजः=शरीर से उत्पन्न। मल:=मल, मैल, पसीना॥२७॥

"कुलंधर सेठ का उत्तर सुनकर वह पुरुष अपने घर वापस हो गया और समस्त वृत्तान्त मणिभद्र से कहा। मणिभद्र भी उसका परिचय प्राप्त कर उसी दिन से उस कन्या का विशेष आदर करने लगा। वह कन्या भी प्रतिदिन विनयादि गुणों से परिजनों का मनोरंजन करती हुई वहाँ रहने लगी। कहा भी है—

"गुण ही गौरव के कारण बनते हैं, जाति, समृद्धि एवं सौन्दर्य के आडम्बर नहीं। मौथा नामक जंगली सुगन्धित घास से फूल तो प्राप्त होते हैं, किन्तु उसके शरीर से तो मल ही उत्पन्न होता है॥२७॥

[६२] उत्तुंगचंगं=विशालकाय एवं सुन्दर। कारावियं= बनवाया। परमगुरु=परम गुरु के। चलणसुस्सूसणपउणी= चरणों की सुश्रूषा में तत्पर। लिंपणमंडणसंमज्जणाइ=लीपने-पोतने, धोने-सजाने आदि का। दविणजायं=द्रव्य-सम्पत्ति प्राप्त

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होती थी। भत्तुल्लयाइकए=भक्ति के आवेश में। रत्थाइयं=रथ आदि। बहुबहुयरं=अधिक-अधिकतर। वियरेइ=वितरण करने लगा। छत्तत्तयं=तीन छात्रों का। कारियं=निर्माण करवाया। केरिसं=कैसा।

माणिक्कचक्क=माणिक्य समूह से। जडिउज्जल=जड़े हुए उज्ज्वल। हेमदंडं=स्वर्ण-दण्ड से। मुत्ताहलावलिपहाणकयावचूलं=मुक्तावलीप्रधान कृत वन्दनवार। चीणंसुएण=चीनांशुक। पडिछन्नुवरिल्लदेसं=आच्छादित मण्डपप्रदेश वाला। चंचंत-कंतमणिकंतिविभासियासं=दैदीप्यमान सुन्दर मणियों की कान्ति से विभासित दिशाओं वाला ॥२८॥

इसके बाद मणिभद्र ने जिनमत से भावित हृदय होकर विशालकाय, उन्नत एवं सुन्दर एक जिनभवन बनवाया। वहाँ वह निरन्तर ही परम गुरु के चरणों की शुश्रूषा में तत्पर रहकर चैत्य में लीपने-पोतने तथा धोने-सजाने का कार्य करने लगी और उस मन्दिर के स्वामी उस सेठ से जो-जो सम्पति प्राप्त होती, उससे उसने जिनभवन में परिक्रमा-मार्ग बनवाकर रथ आदि बनवा दिए। उन कार्यों से सेठ विशेष रूप से सन्तुष्ट हुआ और उसने उसे अधिक-अधिकतर द्रव्य प्रदान करना प्रारम्भ किया। उसने भी उस द्रव्य से देव के लिए तीन छत्रों का निर्माण कराया। कैसे थे वे?

"माणिक्य-समूह से जटित, उज्ज्वल स्वर्णदण्ड-युक्त, बहुमूल्य उत्तम मुक्ताफलों की वन्दनवारों से युक्त, जिसके ऊपर चीनांशुक आच्छादित था, और जिस (छत्रत्रय) की दैदीप्यमान कान्ति से सभी दिशाएँ विभासित थीं ॥२८॥

[६३] जिणोवरि=जिन-भगवान के ऊपर। चामरभिंगार=चामर-भृंगार (कलश)। वेयावच्चं=वैयावृत्य। चउव्विहा-हारवसणसयणासणाइणा=चतुर्विध आहार-वस्त्र-शयन-आसन आदि से। गुरुजणमाराहेइ=गुरुजनों की आराधना करने लगी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

साहम्मियवच्छल्लं=साधर्मी जनों से वात्सल्य भाव को। सुस्सूसणं=सुश्रुषा को। सम्पत्तसम्मत्ता=सम्यक्त्व को प्राप्त करके। कालमइक्कमइ=समय व्यतीत करने लगी।

उस छत्रत्रय को जिनभगवान के ऊपर स्थापित किया गया और अन्य चामर-भृंगारादि अलंकार देव के लिए समर्पित किए गए। इस प्रकार त्रिभुवन के गुरु की वैयावृत्य करती हुई वह वहीं रहने लगी और चतुर्विध—आहार, वस्त्र शयनासन आदि से अत्यंत भक्तिपूर्वक गुरुजनों की आराधना करने लगी। वह साधर्मी जनों से (अपूर्व) वत्सल-भाव दिखाने लगी। इस प्रकार जिन-भगवान एवं सुगुरुओं की शुश्रूषा करती हुई वह कन्या सम्यक्त्व को प्राप्त करके सुखपूर्वक समय व्यतीत करने लगी।

[६४] विसायमुव्वहइ=विषादयुक्त रहती हुई। देवारामो=देव-वाटिका। फलफुल्लपत्तरमाउलो=फल-फूल-पत्ते नीबू एवं आम्रवृक्षादि। सिंचंतो=सींचने पर। अहिययरं=अधिक-अधिक। सस्सिरीओ=शोभायुक्त। निच्छओ=निश्चय। वारिज्जंतीवि=रोके जाने पर भी। जिणवेइयदुवारे=जिन-चैत्य के दरवाजे पर।

अन्य किसी समय उस कन्या ने मणिभद्र- सखा को देखकर उससे पूछा—"तात क्या कारण है कि आपका चित्त विषादयुक्त है?" तब उसने उत्तर में कहा—"पुत्रि, किसी कारण से हमारी देव-वाटिका के फल, फूल, पत्ते एवं आम्रवृक्ष विधिवत् सींचे जाने पर भी आजकल बड़ी तेजी से सूखते जा रहे हैं। उनमें हरियाली नहीं आ रहीं है। अतः मेरे मन में बहुत ही चिन्ता है।" वह बोली—"तात, यदि यही कारण है तब आप विषादयुक्त मत होइये, मैं अपने शील-गुण के माहात्म्य से इस वाटिका को जब तक पूर्ववत् ही फल, फूल एवं पत्तों से युक्त न कर दूंगी, तब तक चतुर्विध-आहार भी ग्रहण न करूंगी, ऐसा मैंने निश्चय किया है।" यह सुनकर सेठ ने उसे रोका, फिर भी वह शासनदेवी को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मन में धारण कर जिन-चैत्य के दरवाजे पर (निराहार रहकर) बैठ गई।

[६५] तओ=तब, तत्पश्चात्। तइयरयणीए=तीसरी रात्रि में। सासणदेवीए=शासनदेवी ने। पच्चक्खी होऊण=प्रत्यक्ष होकर। अज्जेव=आज ही। नवो=नवीन। होही=हो जाएगा। सीलपभावनासियपच्चणीयवंतरोवद्दवत्तणेण=शील की प्रभावना से विरोधी व्यन्तरदेव द्वारा किए गए उपद्रव। सट्ठाणं=अपने निवास पर। विभाया=समाप्त। विभावरी=रात्रि। सिट्ठिपुरओ=सेठ के सम्मुख। निवेइओ=निवेदित किया। हरिसुप्फुल्ललोयणो=हर्ष से विकसित नेत्रवाली। चेइयारामं=चैत्याराम को। अउव्व=अपूर्व। उव्विल्लिर=कम्पायमान। पल्लवाउलो=पल्लव-समूह से युक्त। पप्फुल्ल-फुल्लक्करसोरभुज्जलो=विकसित पुष्पों पर रसपान करते हुए भ्रमर-समूहों से युक्त। सया=सदा। हवेइ=होता है, लगता है, होगा, लगेगा। जए=संसार में ॥२९॥

तत्पश्चात् तृतीय रात्रि में शासन-देवी ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर उससे कहा —"वत्से, विषाद मत करो। विरोधी व्यन्तर-देव द्वारा कृत यह उपद्रव तुम्हारे शील के प्रभाव से नष्ट हो गया है, और अब आज ही प्रातःकाल वह देव-वाटिका पुनः नवीन रूप धारण कर लेगी।" यह कहकर जब शासन-देवी अपने स्थान पर चली गई, तभी रात्रि समाप्त हुई। उस कन्या ने यह वृतान्त सेठ के सम्मुख निवेदित किया। वह सेठ भी हर्ष से उत्फुल्ल नेत्रवाला होकर उस कन्या के साथ उस चैत्याराम में पहुँचा। वह आराम (वाटिका) कैसी थी—

"अपूर्व कम्पायमान पल्लवों से व्याप्त, रसपान करते हुए भ्रमर-समूहों से युक्त, विकसित पुष्पों से सहित, पके हुए फलों से सदा मनोहर लगने वाली वह वाटिका संसार में किसे मनोहर नहीं लगेगी ?"॥२९॥

[६६] पंचसद्दनायपुव्वयं=पंचनमस्कार-मन्त्र के नाद-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पूर्वक। नेइ=ले आया। समणसंघपरियरिओ=श्रमण-संघ से परिवृत्त। उववूहइ=प्रशंसा की। लोओ=सभी लोग। सील-माहप्पचमक्किओ=शील के माहात्म्य से चमत्कृत्त। पिच्छह=देखो। सुक्को=सूखा हुआ। सच्छाओ=अपनी शोभा को। जयइ=जयवन्त। एरिसनरनारिरयणाणि=ऐसे नर-नारी रूपी रत्न। उपज्जंति=उत्पन्न होते है। पडिलाभिय=पड़गाह कर। पारणं=पारणा (भोजन)।

उसे देखकर सेठ ने कहा—"मेरा मनोरथ सफल हुआ है।" पंच नमस्कार मन्त्र के नाद-पूर्वक तथा श्रमण-संघ से परिवृत उसे वह अपने भवन ले आया। लोग भी उस कन्या के शील के माहात्म्य के चमत्कार से उसकी प्रशंसा करते हुए कहने लगे—"देखो, सूखी हुंई वाटिका भी पुनः कैसी छायादार हो गई है! अतः जिनशासन जयवन्त हो, जयवन्त हो, जिसमें इस प्रकार के नर-नारी रूपी रत्न उत्पन्न होते हैं।" इसके बाद उसने मुनि-संघ को पडगाह कर उसे पारणा कराई।

[६७] पच्छिमजामिणीए=पश्चिम रात्रि में। सुत्त-विउद्धा=सोकर उठी हुई। सरिऊण=स्मरण करके। परिणाम-विरसं=परिणाम-विरस। आवायमहुरं=प्रारम्भ में मधुर। किंपागफलं व=किंपाक फल के समान। अणोरपारसंसार=अगाध संसार को। पव्वज्जं=प्रवृज्या। पवन्ना=धारण की। अउन्ना=पापिनी। विसयामिसलुद्धा=विषय-सुख की लोलुपी। पत्थमाणावि=चाहने पर भी। अलद्धभोगा=अप्राप्त भोग। लद्धजिणमयरहस्सावि=जिन-सिद्धान्त के रहस्य को प्राप्त करके भी। सामण्णं=श्रामण्य। काउमसमत्था=पालन करने में असमर्थ। विसिट्ठतवो=विशिष्ट तप। विहाणेसु=विधान करने में। उज्जमिस्सं=उद्यमशील बनूं। सामिग्गहेहिं=सामग्रियों से। पोसंतीए वि=पोषण करते हुए भी। सोसियं=सुखा दिया।

अन्य किसी समय पश्चिम रात्रि में सोकर उठी हुई वह अपने पूर्व-वृतान्त का स्मरण कर विचार करने लगी—"वे धन्य हैं, जो परिणाम-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विरस, प्रारम्भ में मधुर, किन्तु (अन्त में) किंपाकफल के समान विषय-सुख को छोड़कर अगाध-संसार रूपी समुद्र को पार करने के लिए प्रव्रज्या धारण कर लेते हैं। मैं पापिनी, विषय-सुख की लोलुपी, चाहने पर भी अप्राप्त-भोग वाली, किन्तु जिन-सिद्धान्त के रहस्य को प्राप्त करके भी श्रमणत्व के पालन करने में असमर्थ, गृहस्थ-धर्म का पालन करती हुई विशिष्ट तप करने में उद्यमशील बनूँ।" तब उसने बहुविध सामग्रियों से एवं तप-कर्मों से धर्म-शरीर का पोषण करते हुए भी अपने शरीर को एकदम सुखा दिया।

[६८] अपच्छिम=अपश्चिम। मारणंतियसंलेहणं=मारणान्तिक सल्लेखना को। काऊणाणसणं=अनशन करके। पंचपरमिट्ठिसंभरणा=पंच परमेष्ठी का स्मरण करके। सोहम्मेकप्पे=सौधर्म कल्प (स्वर्ग) में। देवत्तणं=देवावस्था को। दिव्वाइं=दिव्यादि। भुंजिय=भोगकर। चइऊण=छोड़कर। अग्गिसम्ममाहणस्स=अग्निशर्मा ब्राह्मण की। दुहिया=पुत्री। समुप्पन्ना=उत्पन्न हुई हो। विज्जुप्पहनामिया=विद्युत्प्रभा नाम की।

तदनन्तर, अपश्चिम-मारणान्तिक सल्लेखनापूर्वक अनशन स्वीकार करके पंचपरमेष्ठि का स्मरण करती हुई, वह मृत्यु को प्राप्त होकर सौधर्म-स्वर्ग-कल्प में जाकर देवावस्था को प्राप्त हुई। वहाँ पर दिव्यादि भोग-सुखों को भोगकर तथा वहाँ से चय कर तुम अब अग्निशर्मा नामक ब्राह्मण के घर में विद्युत्प्रभा नाम की पुत्री के रूप में उत्पन्न हुई हो।"

[६९] बालत्तणे=बचपन में। किंचि=कुछ। मणुजम्मं=मनुष्य-जन्म को। पाविय=प्राप्त कर। देवत्तणमणुहविय=देवगति का अनुभव करके। मिच्छत्तिणो=मिथ्यात्वी। कुदंसणमोहियाए=कुदर्शन से मोहित। ठियाए=रहते हुए। पावमणुट्ठियं=पापों को करती रही। देवगुरु-वेयावच्चं=देवगुरु की वैय्यावृत्ति। माणिभद्दगिहट्ठियाए=मणिभद्र के घर में रहते हुए। पुण्ण-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्साणुभावेण=पुण्य के प्रभाव से। अणन्न-सामण्णं=अनन्य श्रमणत्व को। सुहमणुपत्तं=सुख प्राप्त किया।

"तुम बालपन में कुछ दुखी रहीं। वह मणिभद्र सेठ भी देवगति का अनुभव कर मनुष्य-जन्म प्राप्ति कर, तत्पश्चात् नागकुमार जाति में देव हुआ और जो निर्भाग्या वहाँ मिथ्यात्वी-पिता के घर में रहकर कुदर्शन से मोहित हो कुछ पापों को करती रही, उसी के फलस्वरूप वह प्रथम अवस्था में दुखी हुई। पश्चात् मणिभद्र के घर में रहकर उसने देव-गुरु की जो वैयावृत्ति की, उसके पुण्य के प्रभाव से दूसरों के लिए कठिन सुख की उसे प्राप्ति हुई।

[७०] सच्छाओ=छायायुक्त। वच्चइ=चलेगा, चलता है। छत्ततय=तीन छत्र। मउडाइ=मुकुट आदि। दिन्नाइ=दिए हैं, चढ़ाए हैं। सव्वन्नुणो=सर्वज्ञ—जिनदेव के लिए। सव्वंगभूसिया=सर्वांगविभूषित। सियायवत्तच्छायाए=सितातपत्र की छाया में। हिंडसि=घूमती हो। रत्थाइं=रथ आदि। जिणगुरुवेयावच्चकरणोवज्जियसुकयरुक्खस्स=जिनेन्द्र एवं गुरु की वैय्यावृत्ति (सेवा) करने से उपार्जित सुकृत रूपी वृक्ष के। देवसुहाणि=देव-सुखों का। अणुहविऊण=अनुभव करके। रज्जसिरिं=राज्य श्री का। सिवसंपयं=मोक्षपद को। पाविहिसि =प्राप्त करोगी।

और, जो उसने जिन-मन्दिर की वाटिका को छायादार बना दिया, उसी के फलस्वरूप तुम्हारे साथ यह वाटिका चला करती है और जो छत्रत्रय मुकुट आदि आभरणों को सर्वज्ञदेव को प्रदान किये थे, उसी कारण सर्वांग-विभूषित सितातपत्र की छाया में तुम घूमती हो, और जो जिन-भवन में रथ आदि प्रदान किये थे उसी कारण तुझे बहुत प्रकार के भोग आदि प्राप्त हुए हैं। और अधिक क्या, जिन-गुरु की वैयावृत्ति के सुकृत्य रूपी वृक्ष के फल से तुम देव-सुखों का अनुभव करके मनुष्य-भव में भी राज्यश्री का भोग करके क्रमशः मोक्ष पद को प्राप्त करोगी।"

[७१] नाणीवयणमायन्निऊण=ज्ञानी के वचन सुनकर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुच्छा=मूर्च्छा में। निमीलियच्छी=मुद्रितनेत्र (मुंदे हुए नेत्र) वाली। पवणाइणा परियणेण=परिजनों के द्वारा पंखा किए जाने पर। समुप्पाइयचेयणा=चेतना को प्राप्त हुई। आइट्ठं=उपदेश दिया। जाइसरणेण=जातिस्मरण से। संसारवासाओ=संसारवास से। पियमापुच्छिऊण=प्रियतम से पूछकर। पवज्जं=प्रवृज्या। पडिवज्जिसं=स्वीकार करती हूँ। उव्विग्गं=उद्विग्न। संपयं=इस समय। पयमूले=चरणों में।

इस प्रकार ज्ञानी के वचन सुनकर आरामशोभा मूर्च्छित हो गई। परिजनों ने उस मुद्रित नेत्र वाली की हवा आदि करके मूर्च्छा दूर की। उसने उठकर गुरु को प्रणाम किया और इस प्रकार प्रार्थना की—"भगवन्, आपने जो उपदेश दिया है वह सब मुझे जाति-स्मरण से अब प्रत्यक्ष हो गया है। अतः मैं संसार-वास से उद्विग्न-चित्त होकर अब इसी समय अपने प्रिय से पूछकर तुम्हारे पादमूल में प्रव्रज्या स्वीकार करती हूँ।"

[७२] उस्सुक्का=उत्सुकतापूर्वक, शीघ्रता। मल्लसुंदर-कुमारं=मल्लसुन्दर नामक कुमार को। रज्जे=राज्य में। अहमवि=मैं भी। अच्चंतभवुव्विग्गमणो=संसार से अत्यन्त उद्विग्न मन होकर। ठविय=स्थापित कर, अभिषेक कर। गहिस्सामि=ग्रहण करूँगा। तणयं=पुत्र को। अहिंसिचिऊण=अभिषेक करके। कयजिणसासणप्पभावणो=जिनेन्द्र-वचनों से अपने आत्म को भावित करके। सद्धिं=साथ। महाविभूइए=महोत्सवपूर्वक। पडिवज्जिय=स्वीकार करके। गहियदुविह-सिक्खो=दो प्रकार की शिक्षा ग्रहण कर। कयत्थो=कृतार्थ। हुत्था=हुआ।

आरामशोभा के ये वचन सुनकर राजा ने कहा—"प्रिये, इतनी अधिक उत्सुक मत बनो। मैं भी इस संसार से अत्यन्त उद्विग्नमन हूँ। मल्लसुन्दर नाम के राजकुमार को राज्यगद्दी देकर तुम्हारे साथ ही मैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भी प्रव्रज्या ग्रहण करूँगा।" गुरु को नमस्कार कर वह राजा देवी आरामशोभा सहित घर आकर पुत्र का राज्याभिषेक करके, किये हुए जिन-शासन के प्रभाव से देवी के साथ महान् विभूति वाले उन गुरु के पादमूल में प्रवृज्या स्वीकार कर, क्रमशः द्विविध-शिक्षा ग्रहण कर कृतार्थ हुआ।

[७३] सूरीहिं=आचार्य ने। रायरिसी=राज-ऋषि (राजा जितशत्रु) को। गणहरपए=गणधर के चरणों में। पवत्तिणिपए=प्रवर्तिनी (गणिनी) के पादमूल में। पडिवोहिऊण=प्रतिबोधित करके। कयाणसणा=अनशन करके। सग्गं=स्वर्ग में। सव्व-विरइं=सम्पूर्ण वैराग्य। पाविस्संति=प्राप्त करेंगे। संठावियाइं =रख दिया। चविउ=चयकर (लौटकर)। लहिऊण=लेकर। कयसयलकम्मक्खया=समस्त अष्ट कर्मों का क्षय करके। सिवं पयं=शिवपद (मोक्षपद) को।

निसामिऊगं=सुन करके। सवणामियाभं=कानों के लिए अमृत के समान। देवाण=देवों का। गुरूणवेयावच्चं=गुरुओं की वैयावृत्ति। मुक्खं=मोक्ष को ॥३०॥

तब सूरियों (आचार्यों) ने उस राजऋषि को गणधर के चरणों में एवं उस आरामशोभा को एक प्रवर्तिनी के पादमूल में संस्थापित किया। तत्पश्चात् दोनों ही बहुत दिनों तक भव्यजनों को प्रतिबोधित करते हुए अनशन कर स्वर्ग सिधारे और वहाँ से चय कर मनुष्यभव में सर्वरूपेण वैराग्य प्राप्त कर समस्त कर्मों का क्षय करके वे शिवपद प्राप्त करेंगे।

"कानों के लिए अमृत के समान लगने वाला यही आरामशोभा का चरित्र है। इसे सुनकर देव एवं गुरु की वैयावृत्ति करो, जिससे कि शाश्वत सुख रूप मोक्ष को प्राप्त कर सको।" ॥ ३० ॥

5252

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi